अप्रैल १९६२
50
nP

कृपया बाधा न डालिए
उसे जल्दी सीखना है,
तेजी से बढ़ना है
AMRUTANJAN
LTD.'S
Gripe Mixture
AMRUTANJAN LIMITED

चन्दामामा

अप्रैल १९६२

संपादकीय ... १	भेद ... ४१
भारत का इतिहास ... २	सत्य की महिमा ... ४२
पार्वती-परिणय (पद्य-कथा) ... ५	अवीक्षित ... ४५
भयंकर घाटी (धारावाहिक) ... ९	अयोध्याकाण्ड (रामायण) ... ४९
उपयुक्त पुजारी ... १७	संसार के आश्चर्य ... ५७
भूतों का किया हुआ विवाह २३	फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता ... ६३
उपकारी का उपकार ... ३३	अन्तिम पृष्ठ ... ६४
देव की गवाही ... ३७	

सुगंध
फैलती है
रेमी
स्नो और
पाउडर
Remy
SNOW
Remy
Aykan

फ़्लिट
आपके घर के
कीड़े-मकोड़ों को
नष्ट कर देता है
FLIT

अप्रैल १९६२

हमारे यहाँ चन्दामामा प्रतिवर्ष तीन साल से आ रही है और मैं तथा मेरे घर के छोटे बड़े सभी इसे बड़े चाव से पढ़ते हैं। उसमें से मुझे तो इसमें का रंगीन चित्र अत्यंत आकर्षित रहता है। दास और वास की कथा तो सराहनीय ही रहती है। आप जो इसके ऊपर माँ-बच्चों का मासिक पत्र लिखते हैं परन्तु उसे तो सभी लोक चाव से पढ़ते हैं आपसे निवेदन है कि आप उसे पर लिखा करें।

चन्द्रशेखर दत्त, आरंग

मैं आपकी चन्दामामा का करीब चार साल से ग्राहक हूँ। आपकी चन्दामामा की कहानियाँ और चित्र देखकर ऐसा लगता है कि जैसे कोई मनुष्य बड़ा ही भूखा हो और उसे सुस्वाद भोजन मिल जाय। आपकी चन्दामामा के आने की घर में बड़ी ही प्रतीक्षा रहती है। हमारा एक सुझाव है कि आप चन्दामामा को महीने में दो बार अर्थात पाक्षिक रूप से प्रकाशित करें।

सुब्रत मुखर्जी, लखनऊ

मैं तो सिर्फ इतना ही ज़रूर कहूँगा कि "चन्दामामा" के समान अनोखी मासिक पत्रिका पूरे भारत में मुझे देखने नहीं मिली। 'चन्दामामा' जब मैं लेकर घर आता हूँ, तो मेरे छोटे भाई बहन दौड़ते हैं इसे देखने व पढ़ने। मेरा एक छोटा भाई तीन साल का है 'चन्दामामा' के रंगीन फोटो देखकर खुशी से झूल उठता है। इस तरह हमारे घर में सभी इस पत्रिका को बड़े चाव से पढ़ते हैं।

नाथुलाल गोशी, डूंगरा

पिछले कई वर्षों से यह मासिक पत्रिका पाठकों का मनोरंजन कर रही है। निष्पक्ष मत से पत्रिका की "आलोचना" चन्द शब्दों में व्यक्त है। यों पत्रिका साधारणतः उत्तम है। पर इसमें पृष्ठों की कमी है। यह पाठकों के लिए अनउत्साहवर्द्धक है। विशेषांक में इश्तीहारों की भरमार रहती है। उसके विपरीत कथा वस्तु सराहनीय है।

कथा वस्तुओं में उत्तम और शिक्षावर्द्धक है "वैताल कथाएँ" और प्रायः कहानिया साधारण है। "गोलमटोल भीम" और दास और बास निरर्थक कथावस्तुएं हैं। पत्रिका में "इधर उधर की समाचार" प्रकाशित होने चाहिए, जैसा की होता था। "भारत का इतिहास" उत्तम है।

कुमार

मैं गत तीन वर्षों से चन्दामामा का ग्राहक हूं। हर महिने के २५ या २६ तारीख को मुझे उसके अगले महिने की चन्दामामा प्राप्त होती है। मैं उस चन्दामामा को २९ या ३० तारीख तक पढ़ लेता हूँ। उसके बाद जिस प्रकार किसान अपने खेत में हल जोतकर वर्षा की राह देखता है, उसी प्रकार मैं भी अगले चन्दामामा की राह देखता हूँ। मेरे पास ३ वर्ष के कुल चन्दामामा एकत्रित हैं। इन चन्दामामा कभी-कभी मेरी और मेरे माताजी की झगड़ों का कारण बनते हैं। मेरी माताजी हमेशा कहा करती है कि जिस प्रकार तुम हर मास के समाचार पत्र रद्दी में बेच डालते हो उसी प्रकार यह चन्दामामाएं क्यों नहीं रद्दी में बेच डालते हो? मैं इन चन्दामामाओं को बेचना एक प्रकार का अपमान समझता हूँ। इसलिए कुछ न कुछ कहकर उस बात को टाल देता हूँ। दिसम्बर कि चन्दामामा में मुझे सबसे अच्छा दक्ष-यज्ञ, भयंकर घाटी, अच्छाई की जीत होगी, मना करने पर भी मदद और अपूर्व शक्तियाँ आदि बहुत अच्छी लगी।

वाय. वॅंकटरामन, पूना

चन्दामामा

संचालक : चक्रपाणी

" चन्दामामा " के लिए बहुत से सुझाव मिलते हैं। कुछ सुझावों को हम कार्यान्वित करने का भी प्रयत्न करते हैं।

एक सुझाव है कि " चन्दामामा " में फिल्म सम्बन्धी समाचार क्यों नहीं दिये जाते। कहने की जरूरत नहीं कि " चन्दामामा " बच्चों की कहानी मासिक है। इसलिए फिल्मी सम्बन्धी समाचार देना कहाँ तक उचित होगा, आप ही सहज अनुमान कर सकते हैं। हमें तो अनुचित सा ही लगता है।

वर्ष : १३ अप्रैल १९६२ अंक : ८

भारत का इतिहास

अलेग्जेन्डर अभी पंजाब में ही था कि ३२६ ई. पू. में सिन्ध की निचली घाटियों में, ब्राह्मणों ने लोगों को विदेशी शासकों के विरुद्ध विद्रोह करने के लिए भड़काया। परन्तु अलेग्जेन्डर द्वारा नियुक्त शासकों ने इस विद्रोह का दमन कर दिया।

परन्तु यवन पालकों में फूट पड़ने लगी। पश्चिम पंजाब के शासक फिलिपोस की ३२४ में हत्या कर दी गई। बाकी भारत को छोड़कर न जा सके, और जो प्रान्त उनके आधीन थे, उनका बँटवारा करने के लिए आपस में लड़ने लगे।

उनकी फूट का फायदा उठाकर, विदेशी शासकों से देश को मुक्त करने का श्रेय चन्द्रगुप्त को मिला। वह मौर्य वंश का था। मुरा उसकी या तो माता थी, नहीं तो दादी। वह एक नन्द राजा की पत्नी थी। इसी के नाम से इस वंश का नाम मौर्य पड़ा। क्योंकि यह शूद्र थी इसलिए, एक युक्ति दी जाती है कि मौर्य भी शूद्र थे।

परन्तु प्राचीन बौद्ध साहित्य में लिखा है कि मौर्य सूर्य वंशीय क्षत्रिय थे और पिपलीवन राज्य के परिपालक थे। कुछ भी हो, चन्द्रगुप्त के समय मौर्यों की स्थिति बड़ी हीन थी। जिन्होंने चन्द्रगुप्त का बचपन में पालन-पोषण किया था, वे निरे जंगली और शिकारी थे।

चन्द्रगुप्त जब छोटा ही था, अलेग्जेन्डर से मिला। उसकी घमंड भरी बातें सुनकर, कहते हैं, अलेग्जेन्डर ने उसको मरवा देने की आज्ञा दी थी। चन्द्रगुप्त विन्ध्या पर्वतों में भाग गया और इस तरह उसने अपने प्राण बचाये।

इस बीच तक्षशिला से चाणक्य पाटलीपुत्र आया। वहाँ नन्द राजाओं ने उसका अपमान किया। वह क्रुद्ध हो, विन्ध्या पर्वतों में चला गया। वहाँ उसका चन्द्रगुप्त से परिचय हुआ। उसके द्वारा उसने अपना बदला निकाल लिया। कहते हैं, कहीं चन्द्रगुप्त और चाणक्य कुछ खोद रहे थे कि उनको एक खजाना मिला। उस खजाने के धन से उसने कुछ सेना इकट्ठी की। नन्दों से युद्ध किया, उनको पराजित करके वह गद्दी पर बैठा। उसके कुछ दिनों बाद उसने यवन सरदारों से युद्ध प्रारम्भ किया होगा।

इतना तो सच है ३२१ ई. पू. तक, सिन्ध के पूर्वी भागों में यवनों का शासन खतम हो गया था। यवन सेना भी वहाँ न रही। ३१३ तक चन्द्रगुप्त ने मालवा देश भी बश में कर लिया। फिर उसका साम्राज्य सौराष्ट्र तक फैला।

पुराण और बौद्ध साहित्य के अनुसार चन्द्रगुप्त ने २४ वर्ष तक शासन किया। उसके अन्तिम दिनों में मौर्य साम्राज्य का विस्तार वायव्य दिशा की ओर भी हुआ।

यह इस प्रकार हुआ। अलेग्जेन्डर का एक सेनापति, जिसका नाम सेल्यूकस था, अलेग्जेन्डर की मृत्यु के बाद बेबिलोन का राजा बना। उसने अपना साम्राज्य भूमध्य सागर से सिन्धु नदी तक विस्तृत किया। जब उसने सिन्धु के पूर्व के भाग को जीतना चाहा तो वह अपने इस प्रयत्न में असफल रहा। परिणामस्वरूप सेल्यूकस ने चन्द्रगुप्त से सन्धि कर ली। उसने चन्द्रगुप्त से ५०० हाथी लिये। काबुल का कुछ प्रान्त, गान्धार, बलोचिस्तान का बहुत-सा भाग उसने चन्द्रगुप्त को दिया। विवाह के द्वारा यवनों ने अपने मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध और दृढ़ किये। यही नहीं,

सेल्यूकस ने पाटलीपुत्र में अपना एक दूत भी रखा।

जैनों का कहना है कि जीवन के अन्तिम दिनों ने चन्द्रगुप्त ने जैन मत स्वीकार कर लिया था. मैसूर प्रान्त के श्रवणबेलगोला में वे दिन बिताये थे। परन्तु ग्रीकों का कहना है कि चन्द्रगुप्त ने कभी सेनायें न छोड़ीं, कभी जैनों के अहिंसा मत का अवलम्बन न किया। उसे शिकार का बड़ा शौक था। चन्द्रगुप्त की तरह उसका लड़का बिम्बसार और पोता अशोक भी शिकार के बहुत शौकीन थे। यह सम्भव है कि चन्द्रगुप्त ने बिना जैन मत ग्रहण किये उसको प्रोत्साहित किया हो।

चन्द्रगुप्त ३२८ ई. पू. अथवा उसके बाद ही राजा बना होगा। हिन्दू और बौद्ध ग्रन्थों में लिखा है कि उसने २५ वर्ष शासन किया था। चन्द्रगुप्त के बाद उसका लड़का बिन्दुसार मौर्य सम्राट बना। वह ३०२ में नहीं तो इसके बाद राजा बना होगा।

बिन्दुसार ने २५-२८ वर्ष राज्य किया। इसको "अमित्र घातक" की उपाधि मिली थी। इसने भले ही पिता के दिये हुए साम्राज्य को न बढ़ाया हो, पर उसे कम भी न होने दिया था। जब तक्षशिला में जब विद्रोह हुआ तो उसने उसका दमन किया। इसके समय उत्तर भारत में बहुत-सा भाग, दक्षिण में बहुत-सा भाग, मगध साम्राज्य में था। केवल कलिंग देश ही स्वतन्त्र था।

बिन्दुसार ने अपने पिता की तरह यवनों से अच्छे सम्बन्ध रखे। सेल्यूकस के लड़के से इसका स्नेहमय पत्र व्यवहार रहा।

पार्वती परिणय

तृतीय अध्याय

इंद्र बैठे थे पड़े सोच में
पास ही आ बैठा तोता प्यारा
बोले उससे 'बुला ला मदन को
वे रत क्रीड़ाओं में, नंदन वन में

ऐ तोते, कह उससे मधुर स्वर में
बुलाते हैं तुम्हें अमरपति शीघ्र ही
काम ही ऐसा आ पड़ा
जो निभ सके तुम्हीं से'

इंद्र-आज्ञा ले सिर आँखों पर
उड़ा तोता, हुआ ओझल पल भर में
मदन व्यस्त नंदनवन की झाड़ी में
रंगों से सजा रहे चरण रति के

तोते ने सुनायी आज्ञा इंद्र की
मदन चला पा आज्ञा इंद्र की
ले हाथ में धनुष बनी जो ईख से
बंधे जिसमें फूल रंग बिरंगे कितने ही

कान में फूंक कुछ सती रति के
चला मदन लिये वसंत को साथ
स्वागत कर, बोले इंद्र उससे यों
'तुम्हें करना है कार्य एक महान'

'जो भी हो, इशारा भर कीजिए
पूर्ण कर दूँ वह बात की बात में
दुश्मन कोई हो अगर आपका, जो
चाहता छीनना राज्य आपसे

'मिटा दूँ उसे अपने इस शर से
जला दूँ उसे विरह की आग से
बना दूँ उसे दास, कठपुतली
सुन्दरी के तीक्ष्ण कटाक्ष का

'सुन्दरी हो कोई फूल रही
मदमाते यौवन में, रूप-गर्व में
निश्चित विजय उसपर आपकी
बस दें सहारा मुझे वसंत का

'ब्रह्म ने की है यह भविष्यवाणी
होगी नहीं यह कभी असत्यवाणी
शिव हैं लीन घोर तपस्या में
है हिमालय तपोभूमि उनकी

'पार्वती भी है साथ उनके
इससे बढ़ मौका और क्या होगा
मिला दो शिव-पार्वती को
बंध जाएँ वे प्रेम-बन्धन में

'होगी विजय, होगा यह वसंत साथ तेरे
ज्यों ज्वलित करे ज्वाला को प्रचंड वात'
कह यह इंद्र ने दिया आशीश उसे
थपथपायी पीठ उसकी, भरा उत्साह से

रति कर रही इन्तज़ार पति की
कलप रही वह भर बेचैनी से
लौटे नहीं पति अब तक उसके
रुके क्यों, कहाँ औ किस काम से

दायी आँख लगी फड़कने उसकी
घबराहट बढ़ रही पल-पल में
अनिष्ट कल्पना से उठी सिहर वह
भूमि थी हट रही उसके पदतल से

आँखों से झड़ी लगी आँसुओं की
हुए गाल सुर्ख, पड़ गया चेहरा पीला
देख पति को आते हुए उठी आतुर हो
पूछा 'लगायी देरी क्यों इतनी अपने

'जीत लूँ परम शिव को भी
कौन है जो आवे मार्ग में मेरे'
इंद्र ने की प्रशंसा मदन की खूब
और बोले यों मधुर स्वर में

'रसिकजनों के राजा, लक्ष्मीपुत्र,
तेरे लिए है यह खेल बाएँ हाथ का
यज्ञ भी जो न करने पाए
वह करे यह तुम्हारा पुष्पवाण
'ब्रह्म भी हुए घायल तेरे इन शरों के
शिव को भी है मुश्किल तुझसे बचना
सुन, शिव-पार्वती का होगा जो पुत्र
वही मिटा सकेगा तारकासुर को

'बात कोई ऐसी बड़ी नहीं
बुला भेजा अमरेंद्र ने मुझे
चाहते हैं वे, करूं मैं भंग
तपस्या परमशिव की'

सुन वचन हो अति भीत रति बोली
'हे नाथ, स्वीकृति दी आपने इसकी?
भंग क्या करेंगे आप तपस्या शिव की?
भूलिए नहीं शिव की कोपाग्नि की बात

'परमशिव हैं अति उग्र स्वभाव के
कौन इस लोक में जो न डरें उन से
भय नहीं प्रलयरुद्र का आप को?
भक्ति नहीं आप में परमेश्वर की?

'अप्सराएँ हैं सब मुग्ध तुम पर
आंख है सब की सदा तुम्हीं पर
इंद्र हो ईर्ष्यालु चाहते भेजना दूर तुम्हें
भस्म होना कोपाग्नि में शिव की

'परमशिव के अस्त्र हैं शक्तिमान
बाण है ईख की तुम्हारी
पाशुपत है दिव्य अस्त्र शिव का
ईख बाण की हस्ती ही क्या?

वे हैं त्रिपुरासुरों के संहारक
तुम हो राजा प्रेम औ विरह के
उस ईश की हो कैसे बराबरी
जीते कौन उस शक्ति-पुंज को

'रूठी अगर मैं तो गये डगमगा
भला करोगे सामना उस रुद्राक्ष का ?
छोड़ो ये विचार, भुलाओ ये बातें'
सुन सब कुछ बोला मदन यों

'जानकर भी शक्ति काम की
होती हो क्यों इतनी अधीर
ब्रह्म हैं दे चुके वर हमें
सब ब्रह्मचारी वशी हैं हमारे

'बड़ाई करती हो क्यों शिव की
क्यों हो आँकती मुझे बलहीन
जानो तुम, शिव पागल बन दौड़े पीछे
स्त्री-वेषधारी मेरे जनक के

'अखिल सृष्टि का मैं हूँ कामदेव
रसिकजनों के हृदय पर है साम्राज्य मेरा
डरो नहीं, चले चलो साथ-साथ मेरे
कराएँ हम विवाह शिव-पार्वती का'

बोल यों समझाया रति को
दोनों हुए तैयार चलने तपोवन
वसंत पहुँचे तभी लिये रथ
'चलिए देव, अनुकूल सब हमारे

'लाल कमल हैं चक्र इस रथ के
चिरसंगी चकोर युगल हैं अश्व इसके
पल्लव सुकोमल हैं रास इसकी
सुगंधित फूल-पत्तों का है रथ यह

विराजिए रतिराज, इस रथ पर
लगाया है कौशल अपना इस में'
रतिराज हो हर्षित अति
आसीन हुए ले साथ रति को

प्रिय वसंत ने की डोर ढीली
तोते-मैने चले साथ बन सेना
फूलों से, पराग से होते हुए
पहुँचा रथ शिव के तपोवन में।

[९]

[राजगुरु के साथ आये हुए सैनिकों ने ब्रह्मदण्डी के लिए सारी गुफ़ा छान डाली। आखिर उनको कालभैरव की मूर्ति के नीचे एक गुप्त मार्ग दिखाई दिया। उसे डराकर बाहर आने को मजबूर करने के लिए मार्ग के द्वार पर राजगुरु ने सूखी लकड़ियाँ इकट्ठी करवाईं, उनपर तेल डलवाकर आग लगवा दी। बाद में :—]

तेल से भीगी लकड़ियों और पत्तों में आग लगा दी गई। थोड़ी देर में बड़ी बड़ी लपटें गुप्त मार्ग में जलने लगीं। देखते देखते काला धुँआ सारी गुफ़ा में छा गया। राजगुरु, सेनापति, सैनिक उस धुँए से गुफ़ा से बाहर भाग गये।

"गुरु जी, जैसा कि आपने कहा था, मान्त्रिक इसी मार्ग में कहीं छुपा हुआ होगा। वह ज़रूर इस आग में जल-भुनकर रहेगा।" सेनापति ने कहा।

राजगुरु ने गुफ़ा में फैलते हुए धुँए को देखकर कहा—"यह इतनी आसानी से मरनेवाला नहीं है। ज़रूर यह मार्ग कहीं पहुँचता होगा। वह कहीं न कहीं पहाड़ पर निकलेगा। सैनिकों को जगह जगह खड़ा करो और उनको आज्ञा दो कि ज्योंही उसका कहीं सिर दिखाई दे, उसे पकड़ लें।"

"हूँ....तो तुम्हारी यह चाल है! मुझे ब्रह्मपुर के सैनिकों के हाथ में डालकर तुम भयंकर घाटी की अपार, अमूल्य सम्पदा को चोरी करना चाहते हो! तुम क्या जानोगे मेरा प्रभाव!" सोचकर जादू के डँडे को पत्थर पर मारकर वह चिल्लाया—"अरे विश्वासघाती शिष्य! तुम समझ रहे हो कि मैं नहीं जानता कि तुम उस गड़रिये लड़के के साथ गुफ़ा में हो। मैं अपनी मन्त्रशक्ति से तुम दोनों को भस्म कर दूँगा....नहीं तो जल्दी पत्थर सरकाओ। अच्छा न होगा।"

उसका चिल्लाना सुनकर केशव और जयमल्ल चौंक पड़े।

जयमल्ल फिर सम्भला, उसने कहा—"केशव, इस दुष्ट से हमें कोई आपत्ति नहीं आ सकती, ब्रह्मपुर के सैनिकों के साथ एक आदमी आया है, जिसने उसकी मन्त्रशक्ति हर ली है। उसे सैनिक अवश्य पकड़ लेंगे। ब्राह्मदण्डी जान गया है कि हम यहाँ छुपे हुए हैं। इसलिए हमसे बदला लेने के लिए वह हमें सैनिकों के हाथ पकड़वा देगा। अब हमें यहाँ से भागना होगा।"

राजगुरु जब यों बात कर रहा था, तो ब्राह्मदण्डी मान्त्रिक दागोंवाले शेर की गुफ़ा के पीछे जाकर अपने शिष्य को बुला रहा था। उसने अपना जादू का डँडा कई बार पत्थर पर मारा, परन्तु उसपर तो गड़र पड़ा था। उसे मार्ग न मिला।

ब्राह्मदण्डी के कान बड़े तेज़ थे। वह जान गया कि गुफ़ा में उसका शिष्य और केशव धीमे धीमे बातें कर रहे थे। वह यह भी जान गया कि उन्होंने उसकी आवाज़ सुन ली थी, पर वे उसे गुफ़ा में आने नहीं दे रहे थे।

जयमल्ल की बात केशव को जँची। पर जब चारों ओर से सैनिक हमें ढूंढ़ रहे हैं तो हम कैसे भाग सकते हैं?

यकायक ब्रह्मदण्डी का खाँसना सुनाई पड़ा। फिर—"अरे बाप रे बाप, मेरे उग्रभैरव को नींव से ही उखाड़कर फेंक दिया है। यह धुँआ क्या है! अरे मैं मरा। यहाँ से भागना होगा। लगता है मैं सैनिकों के हाथ पकड़ा जाऊँगा और बुरी तरह सताया जाऊँगा। हे कालभैरव!"

उसका जोर जोर से यह चिल्लाना केशव और जयमल्ल ने सुना।

"सैनिकों ने गुप्त मार्ग में कोई ऐसी चीज़ रख दी है कि वे ब्रह्मदण्डी को बिल में से चूहे की तरह खदेड़ रहे हैं।" जयमल्ल ने कहा।

"अरे धोखेबाज शिष्य, तुम सोच रहे हो कि मैं तुम्हारी बातें सुन नहीं रहा हूँ।" ब्रह्मदण्डी जोर से गरजा, फिर रह रहकर खाँसने लगा।

"इस खोह से पहाड़ पर जाने का रास्ता मैं जानता हूँ। अगर उधर गया तो सैनिक मुझे अवश्य पकड़ लेंगे। यहाँ धुँए में घुट घुटकर मरने से वही अच्छा है। परन्तु मैं सैनिकों को बताऊँगा कि तुम कहाँ छुपे हुए हो। तुम्हारी बोटी बोटी उनसे कटवा दूँगा।" उसने कहा।

तुरत कुछ ऐसी आहट सुनाई दी, जैसे ब्रह्मदण्डी मान्त्रिक गुफ़ा के पिछले भाग से कहीं जा रहा हो। जयमल्ल को डर लगा कि जो कुछ उसने कहा है, वह जरूर उसे करके रहेगा।

उसने केशव को जहाँ वह था, रहने को कहा और स्वयं गुफ़ा के द्वार पर बाहर झाँककर देखा, उसे दूर एक चट्टान पर एक सैनिक खड़ा दिखाई दिया। वह

गुफ़ा की ओर न देखकर कहीं और देख रहा था।

जयमल्ल झट गुफ़ा के अन्दर गया—"केशव, यदि हमें भागना है, तो यही अच्छा मौका है। ब्रह्मदण्डी आकर बतायेगा कि हम यहाँ छुपे हुए हैं।"

केशव उठकर जयमल्ल के पास गुफ़ा के द्वार पर आया। इतने में दूरी पर उसे कुछ शोर सुनाई दिया। ब्रह्मदण्डी की आवाज गूँज रही थी, सैनिक शोर कर रहे थे। केशव और जयमल्ल क्षण भर के लिए निश्चेष्ट हो गये।

वे सोच ही रहे थे कि क्या किया जाये कि एक बूढ़ा पत्थरों के पीछे से तलवार पकड़े हुए जल्दी-जल्दी आया। गुफ़ा के सामने शेर को खड़ा पा, वह सहसा रुका।

"यह देखो तुम्हारे पिता।" जयमल्ल ने कहा। केशव ने चकित हो पिता की ओर देखा।

जयमल्ल ने हाथ हिलाते हुए कहा—"शेर तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ेगा। डर नहीं है, चले आओ।" केशव के बूढ़े बाप ने एक बार चारों ओर देखा। फिर पत्थरों के पीछे से धीमे धीमे आया।

दूरी पर तब तक ब्रह्मदण्डी जोर जोर से मन्त्रपाठ कर रहा था, उसका मन्त्रपाठ सहसा रुक गया। उसके सामने राजगुरु था। कमण्डल में से पानी निकालकर उसने छिड़का।

उसे देखते ही मान्त्रिक का मुख बन्द हो गया—"हाँ, कालभैरव, तुम्हीं मेरी रक्षा करो।" ब्रह्मदण्डी जहाँ था वहीं ढेर-सा लुढ़क गया।

"कालभैरव ही, निस्सहाय हो, दो टुकड़े हो गुफ़ा में पड़ा हुआ है। तुम्हारा

नाम क्या है, मान्त्रिक शिरोमणि ?" कहता राजगुरु मुस्कराता मुस्कराता ब्राम्रदण्डी के पास आया।

राजगुरु और उसके पीछे हथियार लिये सैनिकों को देखते ही ब्राम्रदण्डी मान्त्रिक प्राणों के भय के कारण काँपने लगा। कुछ देर तक उसका मुख न खुला, आखिर बहुत कोशिश करके उसने कहा—"महाराज मेरा नाम ब्राम्रदण्डी मान्त्रिक है।"

"मैंने सोचा था कि तुम बहुत बड़े मान्त्रिक हो। तुम इतने बुद्धिहीन हो कि तुम यह भी नहीं जानते कि राजा कौन है और राजगुरु कौन है।" कहते हुए राजगुरु ने मान्त्रिक को शिखा पकड़कर ऊपर उठाया।

"महामहिम राजगुरु ही मेरी रक्षा करें। मैं आपके दासों का दास हूँ।" कहता ब्राम्रदण्डी गिड़गिड़ाने लगा।

"तुमने क्यों ब्रह्मपुर के सेनापति को जंगल में मरवाया था!" शिखा से उसको झकझोरते हुए राजगुरु ने पूछा।

"राजगुरु, सेनापति को मैंने नहीं मारा था। मेरे शिष्य ने मारा था। वह गुरुद्रोही है। मैंने उसे बहुत मना किया, पर उसने सेनापति की हत्या कर ही दी।"

शिष्य का नाम सुनते ही राजगुरु ने उसकी शिखा छोड़ दी—"अरे हाँ, हम तो उसकी बात ही भूल गये थे। तुम्हारे दोनों शिष्य कहाँ हैं? बताओ।" उसने आँखें लाल की।

"राजगुरु, उन में से एक ही मेरा शिष्य है। दूसरा जंगल में पशु चरानेवाला मूर्ख है। उन दोनों ने मिलकर, ऐसा कोई पाप नहीं है, जो नहीं किया हो।" ब्राम्रदण्डी मान्त्रिक ने कहा।
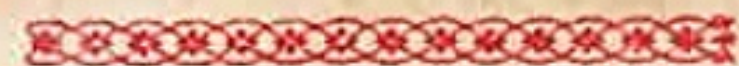
"मैने यह पूछा था कि वे कहाँ छुपे हुए हैं और तुम उनके कारनामों के बारे में बता रहे हो। मैं जानता हूँ कि उन सब कारनामों की जिम्मेवारी गुरु पर है। कहाँ हैं वे!" राजगुरु ने मान्त्रिक को ज़ोर से धमकाया।

"राजगुरु, वे दोनों विश्वासघाती, शेर की गुफ़ा में छुपे हुये हैं। यदि तुरत उनको न पकड़ा गया, तो वे भयंकर घाटी में चले जायेंगे। मेरे गये शिष्य, जयमल्ल को उस भयंकर घाटी के बारे में सब कुछ मालूम है। उसने छुपे छुपे, केशव ने कालभैरव के प्रभाव में जो कुछ कहा था, सब सुना है।" ब्रह्मदण्डी ने कहा।

भयंकर घाटी का नाम सुनते ही राजगुरु को आश्चर्य हुआ। उसने पहिले कभी यह नाम न सुना था। वह जान गया कि मान्त्रिक का इस पहाड़ पर रहना, काल भैरव की उपासना करना, सेनापति की हत्या करना—इन सब के पीछे भयंकर घाटी की कहानी ही मालूम होती है।

राजगुरु ने यह सोचकर साथ के सैनिकों से मान्त्रिक के बताये हुए चिन्हों के आधार पर दागोंवाले शेर की गुफ़ा में

छुपे हुए जयमल्ल और केशव को पकड़कर लाने के लिए कहा।

सैनिक उस तरफ़ भागे। उनको बूढ़े के साथ केशव और जयमल्ल जाते हुए दिखाई दिये। सैनिक ऊपर की चट्टान पर खड़े होकर चिल्लाये—"अरे बूढ़े, उन्हें कहाँ ले जा रहे हो!"

यह सुनते ही केशव का बूढ़ा पिता बिना झिझके चिल्लाया, मैं इन दुष्टों को कहीं नहीं ले जा रहा हूँ। राजगुरु के पास पगडंडी से ला रहा हूँ। तुम शायद मेरा ईनाम हथियाने की कोशिश

में हो, खबरदार। तुम अपने रास्ते चले जाओ।

"मरने की उम्र है, पर तब भी धन के लिए इतना लालच है।" सोचते सोचते सैनिक पीछे मुड़कर राजगुरु के पास भागे भागे गये।

राजगुरु यद्यपि भयंकर घाटी के बारे में जानकारी इकट्ठा करना चाहता था तो भी उसने सोचा कि शिष्यों के मिलने पर ही, इस बारे में त्रामदण्डी से पूछताछ करना अच्छा था, उनके सामने वह झूट न बोल सकेगा।

राजगुरु ने सबसे पहिले मान्त्रिक का घंमड़ चूर करने की ठानी।

उसने सेनापति को बुलाकर कहा— "इस त्रामदण्डी के हाथ पैर बाँधकर जँगली सूअर की तरह बाँस से लटका दो और नगर के द्वार तक ढोकर भिजवा दो।" एक सैनिक को पहिले भिजवाकर ढिंढोरा पिटावा दो कि मान्त्रिक के पकड़े जाने के कारण आज का दिन त्यौहार घोषित कर दिया जाय। फिर भी दो सैनिकों को इसके गुफ़ा पर पहरे पर छोड़ दो।

राजगुरु की आज्ञा सुनते ही सैनिकों ने त्रामदण्डी मान्त्रिक के हाथ पैर बाँध दिये। फिर वे एक मोटी-सी लकड़ी लाये। उसे उस पर लटका दिया, दोनों छोरों पर दो दो सैनिक उठाकर पहाड़ के नीचे उतरने लगे। त्रामदण्डी लकड़ी के इधर उधर हिलने के साथ विलाप करता जाता था। "ओ उन्मत्तभैरव, उपासकों के वट वृक्ष," कितना अपमान करवा रहे हो मेरा।

राजगुरु हँसता पहाड़ की तलहटी पर पेड़ से बंधे अपने घोड़े की ओर चला।

[अभी है]

उपयुक्त पुजारी

विक्रमार्क ने हठ न छोड़ा। वह फिर पेड़ के पास गया। शव उतार कर, कन्धे पर डाल हमेशा की तरह चुपचाप श्मशान की ओर चल पड़ा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"मुझे सन्देह हो रहा है कि कुछ ठगों ने तुझे इस काम पर लगाया है। चूंकि, यदि मनुष्य धोखा देना चाहे तो देवता भी कुछ नहीं कर सकते। यह दिखाने के लिए तुम्हें एक कहानी सुनाता हूँ। सुनो।" उसने यों कहानी सुनानी शुरु की।

एक गाँव में एक मन्दिर था। यह प्रसिद्ध था कि उस मन्दिर की देवी महिमा वाली थी। इसलिये दूर दूर से लोग आते, मनौति करते, और मनौति के पूरे होने पर वे चढ़ावा चढ़ाने आते और चले जाते।

इस मन्दिर का एक धर्मकर्ता था। अनादि काल से उसके कुटुम्ब के लोग

धर्मकर्ता चले आ रहे थे। देवी की पूजा आदि में उन्होंने कभी कोई कमी न आने दी। मन्दिर के पुजारी की नियुक्ति, अर्चना आदि के निर्वहण का दायित्व उन पर था।

एक दिन धर्मकर्ता को सपने में देवी दिखाई दी। "इस समय जो पुजारी है, वह मेरी पूजा ठीक तरह नहीं करता है। इसलिये उसको इस पद से निकाल दो, और किसी को नियुक्त करो।"

धर्मकर्ता ने सोचा कि यह एक सपना था। उसने इसे पूरा करने का प्रयत्न न किया। परन्तु दूसरे दिन रात को और तीसरे दिन रात को भी फिर देवी सपने में दिखाई दी और उसने वही इच्छा प्रकट की। धर्मकर्ता ने सोचा कि अब उपेक्षा करना ठीक न था। वह स्वयं मन्दिर में गया। उसे भी लगा कि पुजारी, पूजा में लापरवाही कर रहा था। उसने तुरत उसको निकाल दिया और उसकी जगह एक और पुजारी को नियुक्त कर दिया।

कुछ दिन बीत गये। फिर रात में धर्मकर्ता को सपने में देवी दिखाई दी। "इस पुजारी को तो मेरी बिल्कुल परवाह नहीं है। इससे अच्छा तो पहिला ही पुजारी था। इसलिए इसको भेज दो, किसी और पुजारी को नियुक्त करो।"

देवी की बात ठुकराई नहीं जा सकती थी। धर्मकर्ता ने दूसरे पूजारी को भी निकलवा दिया और तीसरे पूजारी को नियुक्त किया। पर वह भी बहुत दिन न रहा। देवी फिर धर्मकर्ता को सपने में प्रत्यक्ष हुई। उसने कहा—"छी, छी यह पुजारी तो किसी काम का नहीं है। इससे अच्छा तो दूसरा ही पुजारी था। क्यों तुमने ऐसे को रखा। इसे निकाल दो। अच्छे पुजारी की तुरत नियुक्ति करो।"

इस बार धर्मकर्ता ने नये पुजारी के लिए बड़ी होशियारी से ढूँढ़ की। क्यों ऐसा पुजारी नियुक्त किया जाय, जो देवी को न पसन्द हो। धर्मकर्ता ने एक और पुजारी नियुक्त किया और उससे बार बार कहा कि पूजा में किसी प्रकार की कमी न हो। धर्मकर्ता ने बहुत प्रयत्न किया, पर कोई अच्छा फल न निकला। नये पुजारी के नियुक्त करने के कुछ दिन बाद, देवी फिर सपने में प्रत्यक्ष हुई। उसने कहा पूजा में गलतियाँ की जा रही थीं, नैवेद्य उसको ठीक नहीं पहुँच रहा था। उसने उस पुजारी को भी बदलने के लिए कहा।

इस तरह आठ पुजारी बदले गये। पुजारियों का मिलना ही मुश्किल हो गया जो जो पुजारी मिल सकते थे, वे नियुक्त किये जा चुके थे और निकाले भी जा चुके थे। यदि वह आस पास के गाँवों से उन्हें बुलाना चाहता भी, तो अफवाह उड़ चुकी थी कि धर्मकर्ता किसी भी पुजारी को दो दिन से अधिक नहीं रख रहा था। जिस जिस के पास धर्मकर्ता ने खबर भिजवाई, उन्होंने कहला भेजा कि "दो दिन के लिए वे अपना गाँव छोड़ने के लिए तैयार न थे।"

धर्मकर्ता अच्छे संकट में पड़ा। उसने धन का लालच दिया, यह भी कहा कि पहिले से अधिक सुविधायें दी जायेंगी। फिर भी पुजारी न मिला। पुजारी के न होने पर यदि मन्दिर में पूजा-पाठ न होता, तो इसका पाप धर्मकर्ता को ही लगता।

जब उसने अपनी इस कठिनाई के बारे में एक दो से कहा भी, तो उन्होंने उसे ही फटकार बताई। "धन का लालच

देकर क्या भक्तिवालों का लाना सम्भव है! यह सच है कि जो अब तक पुजारी आये हैं, वे ठीक नहीं थे। दो दिन भी नहीं रखते कि तुम्हारा सन्देह बना रहता है, तब तुम्हें अच्छा पुजारी कैसे मिलेगा!"

तब धर्मकर्ता को उनसे सच कहना पड़ा। "मैंने बिना कारण पुजारियों को नहीं बदला है। देवी ने सपने में प्रत्यक्ष होकर जब कहा कि पुजारी ठीक तरह पूजा नहीं कर रहे थे, तभी मैंने उनको निकाला था। नये पुजारियों के लिए इस तरह माथापची करने में मुझे क्या कोई मजा आता है?"

यह बात जल्दी ही बहुत दूर फैल गई। "देवी ने धर्मकर्ता को सपने में प्रत्यक्ष होकर पुजारी को निकालने के लिए कहा था। इसलिए वे दो दिन के लिए ही पुजारी रख रहे हैं।" लोग एक दूसरे से कहने लगे।

अखिर यह बात एक चालाक आदमी के पास पहुँची। उसने सुन रखा था कि पुजारी को बहुत-सा धन और भी बहुत-सी सुविधायें दी जाती थीं। इसलिए वह अपना गाँव

छोड़कर धर्मकर्ता के गाँव में गया। उससे उसने कहा—"मुझे सपने में एक देवी दिखाई दी। उसने बताया कि वह इस गाँव के मन्दिर में रहती थी और उसे अच्छा पुजारी नहीं मिला था। आपसे उन्होंने कई बार इस बारे में कहा भी, पर कुछ हुआ नहीं। इसलिए उसने मुझ से कहा कि मैं आकर पूजा करूँ। मैं देवी की बात ठुकरा न सका।"

यह सुन धर्मकर्ता को बड़ी खुशी हुई। उसे लगा जैसे उस पर से बहुत बड़ा भार उतर गया हो। क्योंकि इस बार देवी ने स्वयं अपना पुजारी चुन लिया था, इसलिए उस पर कोई जिम्मेवारी न थी। वह निश्चिन्त रह सकता था।

धर्मकर्ता ने इस पुजारी को बड़ी आदर की दृष्टि से देखा। उसके रहने के लिए एक अच्छे घर का प्रबन्ध किया। बहुत-सा धन भी दिया और मन्दिर उसे सौंप दिया।

सच कहा जाये तो यह पुजारी बड़ा नीच था। धोखेबाज और निरा नास्तिक था। मन्दिर में घुसने पर उसने देवी की मूर्ति की साड़ी निकालकर अपनी पत्नी को
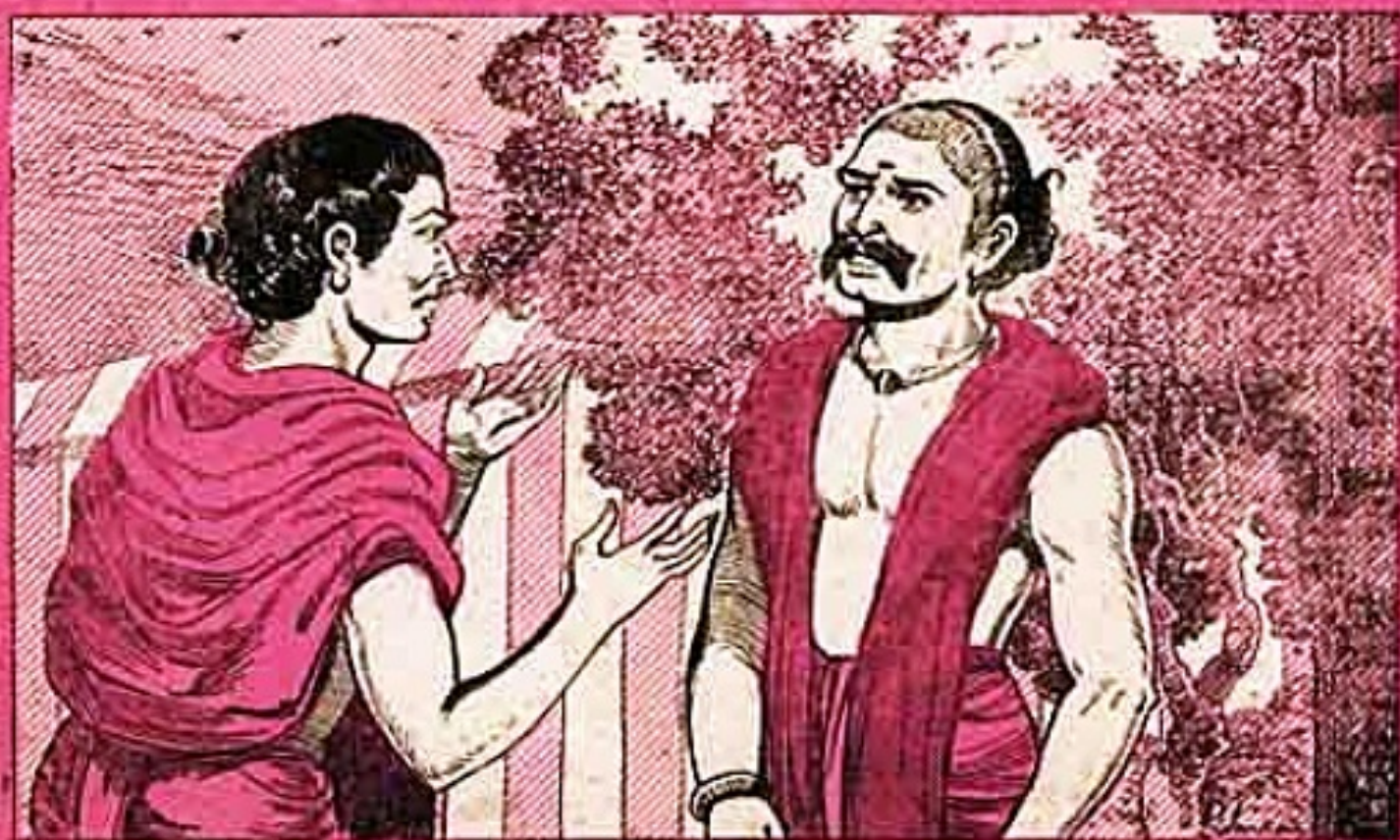
दे दी, और मूर्ति पर एक फटा कपड़ा ओढ़ दिया। उसने कभी देवी की पूजा न की, न कभी उस पर नैवेद्य ही चढ़ाया। दीपाराधना के लिए जो तेल दिया गया था, उसे भी घर ले गया। यदि गाँववाला आकर कोई दीप जला जाता, तो दीप जलता, नहीं तो मन्दिर में अन्धेरा रहता।

सप्ताह बीत गये, मास और वर्ष बीत गये। मन्दिर ऐसा दिखाई देता था, जैसे उजड़ गया हो। लोगों का आना भी कम हो गया। फिर भी धर्मकर्ता को सपने में देवी न दिखाई दी। उसने इस पुजारी को हटाकर नये पुजारी को भी रखने के लिए न कहा।

"धर्मकर्ता ने इस तरह के पुजारी को लाकर क्यों रखा है? वह बड़ा दुष्ट है। यदि कोई गाँववाला आकर कहता तो धर्मकर्ता कहता—"मैंने इस पुजारी को कहाँ रखा है? उसे तो देवी ने ही भेजा है। देवी ने ही नियुक्त किया है।"

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा—"राजा, वह देवी, जिसने इतने पुजारियों को हटवा दिया था, क्यों अन्तिम पुजारी के दुष्कार्यों को सहती चुप रही? धर्मकर्ता से स्वप्न में प्रत्यक्ष होकर, नये पुजारी को रखने के लिए उसने क्यों नहीं कहा? इन प्रश्नों का उत्तर तुमने जान बूझकर न दिया, तो तुम्हारा सिर टुकड़े टुकड़े हो जायेगा।"

इस पर विक्रमार्क ने कहा—"इसमें सन्देह की क्या बात है? जब नये पुजारी ने मूर्ति की साड़ी निकालकर उसे फटे कपड़े पहिनाये थे, तभी देवी उस मन्दिर से चली गई होगी।"

राजा का इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य हो गया और पेड़ पर जा बैठा।
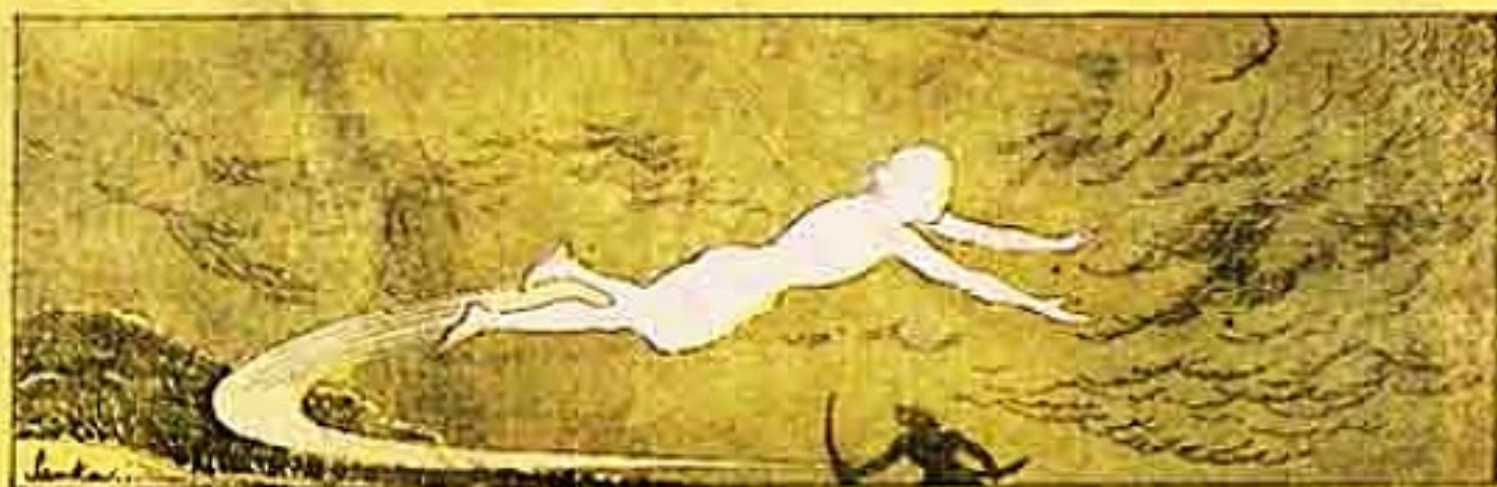
भूतों का किया हुआ विवाह

केरो सुल्तान के दो जवान वज़ीर थे। उनका नाम था शम्स अल्दीन और नूर अल्दीन उनमें से एक सुल्तान के निजी काम देखा करता। जब एक सुल्तान के पास रहता, तो दूसरा शासन सम्बन्धी कार्य देखा करता।

वे दोनों एक नौकरी ही नहीं कर रहे थे, बल्कि बचपन से एक साथ जीवन व्यतीत करते आये थे। उन दोनों में दान्त काटी रोटी थी। एक दिन वे दोनों अपने भविष्य के बारे में बातें कर रहे थे। "हम दोनों को शादी कर लेनी चाहिये और दोनों की शादी एक ही दिन होनी चाहिये।" उन्होंने सोचा।

"यदि खुदा की मेहरबानी से हमारे लड़की हुई और तुम्हारे लड़के, तो दोनों की शादी करेंगे।" शम्स ने कहा।

"अच्छा, तो ऐसा ही करेंगे। पर तुम्हारी लड़की के लिए हमारे लड़के को कितना धन देना होगा?" नूर ने पूछा।

"कम से कम तीन हज़ार दीनारें और तीन गाँव न दिये, तो मेरी लड़की तुम्हारी बहू न बनेगी।" शम्स ने कहा।

"वाह, तुम तो दाम इस तरह बढ़ा रहे हो, जिस तरह व्यापारी उस माल का बढ़ाता है, जिसे वह बेचना नहीं चाहता। मेरे लड़के का उसका पति होना ही उसके लिए बड़े भाग्य की बात है। क्या समझ रखा है तुमने?" नूर ने कहा।

"तुम इस ख्याल में न रहना कि तुम वज़ीर हो गये हो। तुम में इतनी कृतज्ञता भी नहीं है कि तुम मेरी वजह से वज़ीर बने हो। यदि तुम्हारे लड़के ने अपने भार जितना सोना भी दिया तब भी मैं

भवानी प्रसाद

अपनी लड़की न दूँगा। यह याद रखो।" शम्स ने कहा। जो बातचीत प्रेम से शुरु हुई थी वह यों तू तू मैं मैं में बदलने लगी।

"जान चली जाये, पर मैं अपने लड़के की शादी तेरी लड़की से नहीं करूँगा।" नूर ने कहा।

"मैं कल सुल्तान के साथ पिरामिड जा रहा हूँ। वापिस आने पर तुम्हें ठीक सजा दिलवाऊँगा।" शम्स ने कहा।

अगले दिन सवेरे, शम्स, सुल्तान के साथ नील नदी के किनारे किनारे पिरामिड के इलाके में गया। नूर बड़ा व्याकुल हो नींद से उठा। स्नान करके उसने नमाज पढ़ी। शम्स की बातें उसे भालों की तरह बींध रही थीं। उसने कैरो नगर छोड़कर जाने की सोची।

नूर ने अपने खच्चरों में से एक अच्छा खच्चर लिया। नौकरों से कहा कि स्वास्थ्य के लिए नगर के पास ही वह रहने जा रहा था, इसलिए उन में से किसी के आने की ज़रूरत न थी—एक थैले में ढेर-सा सोना लेकर वह निकल पड़ा। उसने बहुत दिन सफर किया। बहुत-से नगरों में ठहरा। एक दिन शाम को बसरा शहर में पहुँचा, वहाँ एक सराय में ठहरा। नूर यह भी नहीं जानता था कि वह बसरा नगर में पहुँचा था—क्योंकि वह किसी काम पर तो वहाँ आया न था। वह जहाँ ठहरा था, ठीक उसके सामने बसरा के सुल्तान का महल था। वहाँ बसरा के वजीर ने नूर के खच्चर को देखा, उस पर कीमती जीन देखी। उसने यह जानने के लिए खबर भेजी कि कौन उस पर सवार होकर आया था। उसका विश्वास था कि वैसा खच्चर या तो किसी राजा के पास होगा, नहीं तो किसी वजीर के पास।

बसरा के वजीर को जब मालूम हुआ कि नूर कैरो का रहनेवाला था और वह वजीर था और अब दुनिया की सैर करने निकला था, तो वह उसे देखने आया। "बेटा, इतनी छोटी उम्र में ही क्यों तुम दुनिया की सैर के लिए निकले हो? हमारे घर आकर रहो। मेरे कोई लड़का नहीं है। एक ही लड़की है। अगर तुम उससे शादी करना चाहो तो मैं कल ही सुल्तान के पास जाकर कहूँगा कि तुम मेरे सम्बन्धी हो और मेरी लड़की के साथ विवाह करने आये हो। मेरी जगह सुल्तान तुम्हें ही वज़ीर मुकर्रिर कर देंगे। नूर ने कुछ देर सोचा। फिर जो कुछ बूढ़े ने कहा था मान गया। बूढ़े ने बसरा नगर में अमीरों और व्यापारियों को अपने घर दावत दी और लोगों को उसने कहा कि नूर उसका सम्बन्धी था और उसका दामाद होनेवाला था। उन सब के सामने सगाई हुई। फिर उसने अपनी लड़की देकर नूर का विवाह किया और सुल्तान से परिचय भी कराया। नूर बसरा में आराम से जिन्दगी बिताने लगा।

और उधर कैरो में शम्स तभी वह झगड़ा भूल गया था। पिरामिड से वापिस आने पर उसने जब नूर के बारे में पूछा, तो उसे बताया गया कि वह कहीं चला गया था। शम्स को यह सोच बड़ा अफ़सोस हुआ कि उसकी वजह से नूर यूँ कैरो से चला गया था। उसने सुल्तान से जो कुछ गुज़रा था कह सुनाया। सुल्तान ने अपने राज्य में हर जगह आदमी भेजे। पर कहीं भी नूर का पता न लगा। शम्स को बड़ा पछतावा हुआ।

समय बीतता गया। शम्स की कैरो के एक धनी सेठ की लड़की से शादी हुई। उसे न मालूम था, पर उसका विवाह भी

उसी दिन हुआ था, जिस दिन नूर का हुआ था। इस तरह उन दोनों की वह इच्छा, जिसके बारे में उन्होंने एक दिन बातचीत की थी, पूरी हो गई। यही नहीं, जैसा कि उन्होंने चाहा था, शम्स के एक लड़की, नूर के एक लड़का, एक ही दिन पैदा हुए। पर वे दोनों खुशी मनाने के लिए एक जगह न थे।

नूर का लड़का बड़ा खूबसूरत था। उसका नाम हसन बद्रुद्दीन रखा गया। हसन का नामकरण संस्कार बड़े वैभव के साथ हुआ। अगले दिन बसरा के सुल्तान ने नूर को अपने ससुर की जगह वज़ीर नियुक्त किया। नूर का ऐश्वर्य दिन प्रति दिन बढ़ता जाता था। उसने बहुत-सी सम्पत्ति भी कमाई। हसन अभी चार वर्ष का था कि उसके ससुर गुज़र गये। उसने हसन को एक अच्छे गुरु से शिक्षा दिलवाई।

हसन ने पन्द्रह वर्ष की उम्र होते होते अपनी पढ़ाई समाप्त कर दी। तब तक वह अपने पिता के घर से बाहर कहीं न गया था। शिक्षा समाप्त होते ही नूर अपने लड़के को सुल्तान के पास ले गया। हसन के सौन्दर्य और बुद्धिमत्ता को देखकर
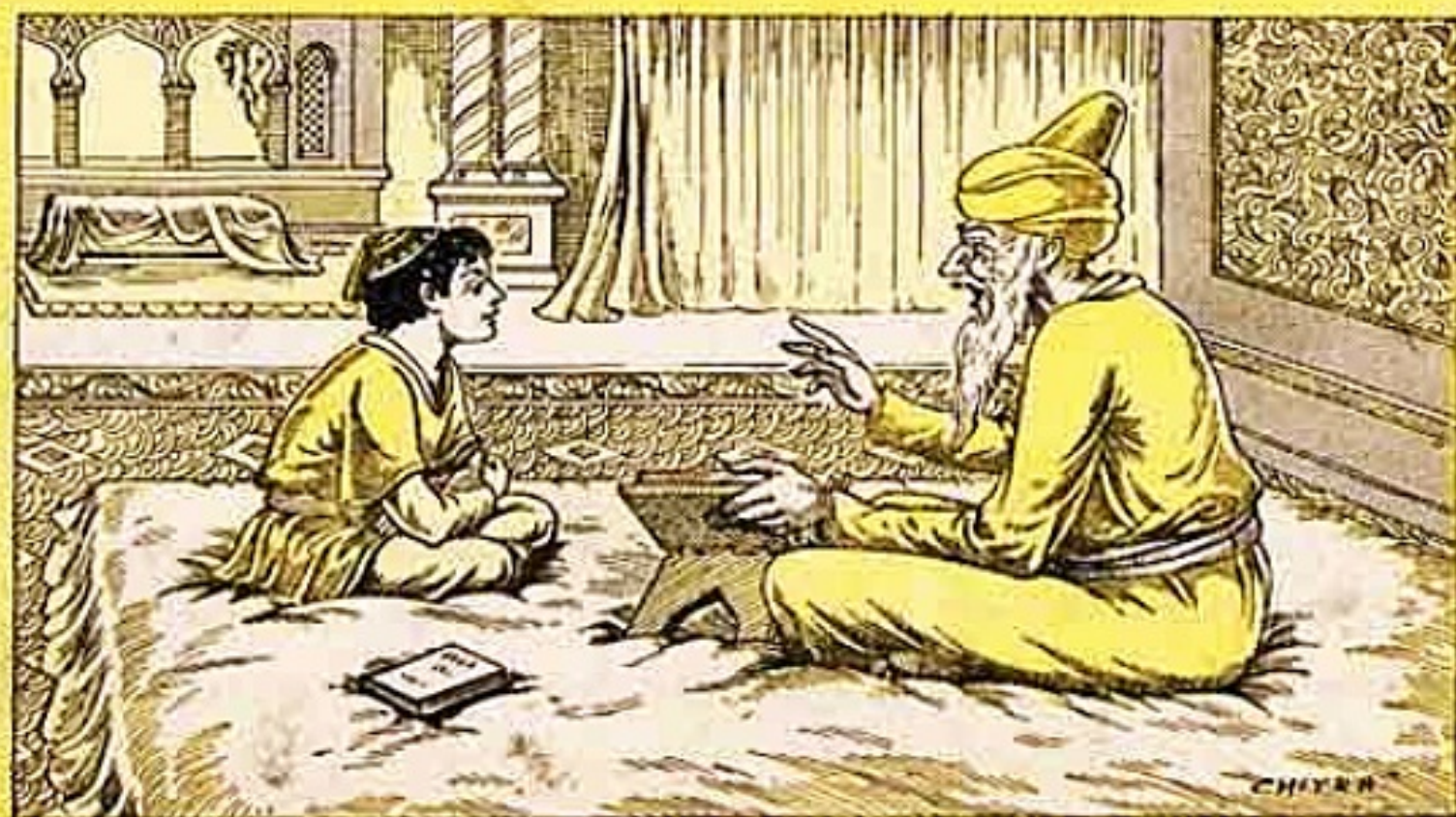
सुल्तान हक्का बक्का रह गया। नूर तुम अपने लड़के को रोज लाया करो। उसने हसन को आन्तरंगिक साथी का पद दिया और उसे बहुत-सी चीजें उपहार में दीं।

इसके कुछ दिन बाद नूर को बीमारी हुई। यह सोच कि उसकी बीमारी ठीक न होगी, उसने लड़के को बुलाकर जो कुछ हितोपदेश देने थे दिये। उसने अपनी सारी कहानी सुनाई और उससे कागज़ पर लिखवाया भी। फिर उसने हसन से कहा—"बेटा, इस कागज़ को अपने पास सम्भालकर रखना। अगर तुम्हारा भाग्य यहाँ साथ न दे, तो अपने बाप दादाओं के शहर कैरो में जाओ। वहाँ के वज़ीर शम्स से मिलो और उससे मेरे बारे में कहना। वहाँ तुम्हें किसी बात की कमी न होगी। आराम से ज़िन्दगी कट जायेगी। यह कागज़ सम्भालकर रखना, जो कुछ मैंने नीति बोध किया है उसे न भूलना।"

हसन ने उस कागज़ को अपनी पगड़ी में सी दिया। इसके बाद नूर की मौत हो गई, उसकी मौत पर उसके साथ बसरा के सुल्तान और अमीरों ने भी मातम

मनाया। नूर की अन्त्येष्टिक्रिया भी बड़े अच्छे ढँग से की गई। हसन दो महीने शोक सागर में डूबा रहा, वह सुल्तान के दर्शन करना भी भूल गया।

राजाओं का अनुग्रह उतनी ही आसानी से मिलता है, जितना कि क्रोध। सुल्तान ने यह भी न सोचा कि हसन दुःखी था, उसने सोचा कि घमंड के कारण वह उसे देखने न आया था और उसे वह पद न दिया जिसे वह देने की सोच रहा था, किसी और को वह पद दे दिया। यही नहीं उसने यह हुक्म भी दिया कि उसके घर और जमीन जायदाद सब जब्त कर लिए जायें और उसके हाथ बाँधकर उसके सामने हाज़िर किया जाय।

सुल्तान के राज-महल में रहनेवाले गुलामों में से एक को हसन पर बड़ा प्रेम था। सुल्तान की आज्ञा सुनते ही वह भागा भागा हसन के घर गया और जो कुछ गुज़रा था कह सुनाया। "आप यहाँ एक मिनट न ठहरो। अगर तुरंत न भाग गये तो जान न बचेगी।" उसने कहा।

हसन बिना एक कौड़ी लिए घर से निकल पड़ा। ताकि उसे कोई पहिचान न ले, उसने अपने मुँह पर कपड़ा डाल लिया। सुल्तान की दुष्टता के बारे में मालूम करके उसके बारे में दया दिखा रहे थे। उनकी बातें सुनता वह पिता की मकबरे के पास पहुँचा। उसने अपने मुँह पर से कपड़ा हटा दिया और वहाँ बैठ गया। उसने रात वहीं बिताने की ठानी। वहाँ यों दुःखी बैठा था कि बसरा नगर का कोई व्यापारी कहीं से वापिस आता, वहाँ आया। उसने उसे पहिचान लिया। उसने पूछा—"पिता के गुज़र जाने के बाद और कोई आपत्ति तो नहीं

आ पड़ी है आप पर ? आपकी शक्ल देखकर तो ऐसा लगता है कि आप बहुत दुःखी हैं।" उसने पूछा।

"कुछ भी तो नहीं। दुपहर जब सो रहा था, तो सपने में पिता जी ने फटकारा कि मैं उनका मकबरा बराबर नहीं देख रहा था। उठते ही जैसा मैं था, वैसा यहाँ चलाया।" हसन ने कहा।

"तो देखिये। मैं बहुत दिनों से आपसे कुछ व्यापार की बात करना चाहता था। अब मौका मिला है। मैं आपके पिताजी से व्यापार किया करता था। आपकी नावें माल लेकर जल्दी ही वापिस आ रही हैं, एक नाव माल आप अगर मुझे हज़ार दीनारों में दे देंगे तो मैं अभी नगद दे दूँगा।" व्यापारी ने कहा।

हसन, क्योंकि कुछ और कह न सकता था, इसलिए मान गया। उसने उस व्यापारी से हज़ार दीनारें ले लीं और कागज लिखकर दे दिया कि जो नाव पहिले आयेगी, उसका सारा माल उस व्यापारी को दे दिया जाय।

अन्धेरा हो गया। चान्द निकला। हसन वहीं सो गया। थोड़ी देर बाद,

एक एक श्मशान को देखती आती एक भूतनी ने हसन को देखा। उसके मुँह पर चान्दनी गिर रही थी। "अरे भाई कितने खूबसूरत हो, चान्द से किसी कदर कम नहीं हो।" यह सोच भूतनी वहीं खड़ी हो गई और उसने जी भरके हसन को देखा। यह सोच कि वह उठेगा तो उससे बातचीत भी हो सकेगी, भूतनी वहाँ कुछ देर खड़ी रही। चूँकि वह गाढ़ निद्रा में था, इसलिए यह सोच फिर कभी मिल लेंगे, वह भूतनी आगे बढ़ी। भूतनी को कुछ दूर जाने पर एक भूत दिखाई दिया।

"कितना खूबसूरत, खूबसूरत!" भूतनी ने भूत से कहा।

"क्या फ़ायदा? कितनी ही खूबसूरत हो, कल कुबड़े की हो जायेगी।"

"क्या कह रहे हो तुम? कुबड़े की क्या?" भूतनी ने कहा।

"कैरो में शम्स की लड़की सित्तलहसन है न? बड़ी खूबसूरत है लड़की। उसकी आज एक कुबड़े से शादी हो रही है। हर किसी का अपना अपना भाग्य है।" भूत ने कहा।

"अरे कैरो की बात तुम कह रही हो, यहाँ एक लड़का है। आओ देख आयें, यकीन मानो, बिल्कुल चान्द-सा है।" भूतनी ने कहा।

फिर दोनों भूत मिलकर दूर के मकबरे के पास आये। सोते हुए हसन को देखा।

"लड़का तो खूबसूरत है, पर वह लड़की और भी सुन्दर है।" भूत ने कहा।

"इससे बढ़कर कोई और सुन्दर नहीं हो सकता।" भूत ने कहा।

थोड़ी देर दोनों में बहस हुई, फिर भूत ने कहा—"चलो, एक काम करें। उस लड़की की कुबड़े से न शादी कराकर, इससे करवायेंगे।"

"यह अच्छी बात है। तुम इस लड़के को पीठ पर सवार करो, चलो, कैरो चलें।" भूत ने कहा।

भूत सोते हुए हसन को पीठपर रख भूतनी के साथ कैरो नगर के लिए निकल पड़े।

जिस दिन हसन पैदा हुआ था, उस दिन शम्स के भी एक लड़की पैदा हुई थी। उसका नाम सित्तल हसन नाम रखवाया गया था। जब वह अट्ठारह साल की हुई तो सुल्तान ने सुना कि उसके वज़ीर की लड़की बड़ी सुन्दर थी।

उसने शम्स को बुलाकर कहा—"तुम मेरे साथ अपनी लड़की की शादी कर दो "

शम्स घबरा गया। उसने सुल्तान से सविनय कहा—"हुज़ूर, मुझे माफ़ करें। आप जानते ही हैं कि मेरे बचपन के मित्र का अट्ठारह साल से कहीं पता नहीं लग रहा है। हमने खुदा के नाम पर कभी कसम खाई थी कि अगर मेरे लड़की हुई और उसके लड़का, तो दोनों का ब्याह करवायेंगे। "मैं उस कसम को नहीं तोड़ सकता हूँ। अभी हाल में मेरे पास खबर आई थी कि मेरा मित्र नूर बसरा पहुँच गया है और वह वहाँ के सुल्तान का वज़ीर है। और उसके एक लड़का भी है। मेरी लड़की की शादी नूर के लड़के से ही होगी। अगर आप चाहें तो लड़कियों की क्या कमी है!"

यह सुन सुल्तान झुँझला उठा। "नीच तुम्हें तो इसे ही अपना महा भाग्य समझना चाहिए था कि मैं तुम्हारी लड़की से शादी करना चाहता था। अब तुम इधर उधर के बहाने करके इनकार करते हो! तो देखते रहो, मैं तुम्हारी लड़की की शादी महल के अधमाधम से करवाऊँगा।

सुल्तान ने जब अपने नौकर चाकरों को देखा, तो उनमें एक कुबड़ा गुलाम था। वह सुल्तान के घोड़ों की मालिश किया करता था। उसने बहुत मिन्नत की पर सुल्तान न माना। उसने दावत दी और उसको दुल्हा बनवा दिया। जहाँ शादी हो रही थी, वहाँ सुल्तान ने शम्स का आना ही मना कर दिया। शादी हो गई। उस दिन कुबड़े को दुल्हिन के पास भेजा जा रहा था। (अभी है)

उपकारी का उपकार

चोरों को पकड़ाने के लिए जो उसे ईनाम मिला था, उसे गाँठ में रखकर भीम अपनी नानी को देखने निकला। उतना धन देखकर नानी बहुत खुश होगी, फिर कभी उसे अनाड़ी नहीं कहेगी, यह सोच उछलता, कूदता जोश में वह चलने लगा।

भीम अभी कुछ दूर ही गया था कि रास्ते में एक नहर आयी। नहर काफ़ी गहरी थी। उसके किनारे भी ऊँचे ऊँचे थे। नहर पर हल्के फट्टों का पुल था। भीम उछलता कूदता जो उस पुल पर गया तो वह टूट गया। आधा पुल पानी में गिर गया और आधा खड़ा रहा। भीम नीचे गिरनेवाला ही था कि सौभाग्यवश उसने वह भाग पकड़ लिया, जो अभी ऊपर था। उसे पकड़ लटकता रहा।

वह ऊपर भी न चढ़ पाता था और जब वह यों लटक रहा था, तो उस तरफ़ एक बंजारा आया। वह भीम की असहाय स्थिति देख, यह सोच—"यह विचारा बड़ी आफत में फँसा है," उसकी मदद करने आया।

उसने भीम से कहा—"अरे लड़के, जोर से पकड़े रहो। मैं तुम्हारे पैर पकड़कर तुम्हें किनारे पर खींच दूँगा।"

बंजारा जिस तरफ़ खड़ा था, उस तरफ़ नदी में एक बड़ी-सी चट्टान जाती थी। बंजारा उस पर खड़े होकर हाथ फैलाकर, भीम के पैर छू सकता था। यदि वह जोर से खींचता, तो वह किनारे पर आ सकता था। बंजारा उस पत्थर पर गया। उसने हाथ बढ़ाकर कहा—"अरे भाई, अपने पैर जरा मेरी ओर करो।"

गोल मटोल भीम—९] [ज्योत्स्ना

भीम ने अपने पैर बंजारे की ओर बढ़ाये। बंजारे ने उन्हें ज़ोर से पकड़ लिया। बंजारे का हाथ लगते ही भीम को गुदगुदी हुई। उसने अपने पैर ऊपर खींच लिए। क्योंकि भीम के पैर उसने जोर से पकड़ रखे थे, इसलिए उसकी पैर चट्टान पर न टिक सके। वह भी भीम के पैर पकड़कर लटकता रहा।

"अरे, हम तुम्हारी मदद करने आये थे और हम ही बुरे फँसे। तुम पकड़ न छोड़ो, नहीं तो दोनों गिरेंगे। जब तक कोई आता नहीं, हम यूँ ही लटकते रहेंगे।" बंजारे ने कहा।

भीम ने सिर नीचे करके बँजारे की ओर देखकर पूछा—"तुम्हारे कन्धे पर वह रस्सी क्या है?"

"वह तम्बूरा है।" बंजारे ने कहा।

"वह किसलिए है?" भीम ने कहा।

"उनको बजाता, गाता घर घर भीख माँगता हूँ।" बंजारे ने कहा।

"अब एक गाना तो सुनाओ।" भीम ने कहा।

"अरे, अब क्या गाना गाया जाये! मेरा सिर।" बँजारे ने कहा।

"गाते हो, या हाथ छोड़ने के लिए कहते हो!" भीम ने पूछा।

"तुम्हारा भला होगा, वह न करना।" कहकर बंजारा गाने लगा।

"बिना तम्बूरा बजाये, गा रहे हो!" भीम ने पूछा।

"मैंने हाथों से तुम्हारे पैर जो पकड़ रखे हैं! कैसे बजाऊँगा।" बंजारे ने कहा।

"यदि हाथ खाली न हो तो उसे मुझे दे दो।" भीम ने पुल पर से हाथ छोड़ बंजारे की ओर बढ़ाया।

दोनों उतनी ऊँचाई से नहर में जा गिरे। सौभाग्यवश नहर में अधिक पानी न था, इसलिए वे डूबे नहीं। बंजारे को बड़ी चोट लगी। क्योंकि वह बंजारे पर गिरा था, इसलिए भीम को अधिक चोट न लगी।

भीम की सहायता से बंजारा किनारे पर पहुँचा। "ऐसा लगता है, हाथ पैर टूट गये हैं। हिल नहीं पाता हूँ। घाव पर ज़रा तेल लगाओ। ये दो आने और बर्तन लेकर, वह जो गाँव दिखाई

दे रहा है, वहाँ से सरसों का तेल ले आओ।"

भीम पैसे और बर्तन लेकर गाँव में जाकर दुकान से तेल खरीद लाया।

दुकानदार ने बर्तन में तेल डालकर कहा—"थोड़ा तेल बाकी रह गया है, यदि कोई शीशी, नहीं तो कोई बर्तन हो तो दो, उसमें भी दे दूँगा।"

भीम ने तेल के बर्तन को गौर से देखा। उसने पाया कि अभी उसमें कुछ जगह थी। "जो बचा है, इसी में ही डाल दो। इस थोड़े से तेल के लिए एक और बर्तन की क्या ज़रूरत है!" कहकर उसने बर्तन पलट दिया। सारा तेल नीचे गिर गया।

दुकानदार जान गया कि भीम निरा बे-अक़्ल था। उसने बाकी तेल, बर्तन की तह में डालकर उसे जाने के लिए कहा। भीम उस बर्तन को बड़ी होशियारी से बंजारे के पास ले गया।

"क्या दो आने का इतना ही तेल आता है? क्या बर्तन उलट तो नहीं दिया था?" बंजारे ने पूछा।

"यह तो वह तेल है, जो बच गया था, जो असली तेल था, वह यह रहा—उसने फिर बर्तन पलटा। इसबार जो तेल तह में था, वह भी नीचे गिर गया।

"बड़ा भला किया है तुमने, अब तुम अपने रास्ते जाओ।" कहकर बंजारे ने जो तेल नीचे गिरा था, उसे अपनी चोटों पर लगा लिया।

भीम बड़ा खुश हुआ कि बंजारे ने उसकी प्रशंसा की थी। वह खुशी खुशी चल पड़ा।

देव की गवाही

कून्डा गाँव में गोविन्द नाम का एक चोर रहा करता था। चोरी उसकी पैतृक वृत्ति थी। गोविन्द के बाप दादा भी चोर थे।

गोविन्द की एक बहिन थी। उसके एक लड़का था। उसका नाम देव था। मामा के पास चोरी करना सीखने के लिए देव को उसकी माँ ने गोविन्द के पास भेजा।

देव बचपन से ही बड़ा चोर था। इसलिए गोविन्द के पास वह अच्छी तरह चौर विद्या सीख सका। वह अपने मामा से भी अधिक चालाकी से चोरी करने लगा। यह देख जब कभी गोविन्द चोरी करने जाता तो साथ अपने भान्जे को भी ले जाता।

एक दिन गोविन्द और देव एक और गाँव में चोरी करने गये। जब वे गाँव में पहुँचे तो अन्धेरा हो गया था। उस गाँव का न्यायाधिकारी धनी था। इसलिए उन्होंने उसके यहाँ चोरी करने की सोची।

यह न्यायाधिकारी कुछ यूँ ही था। उसके बच्चे न थे। वह और उसकी पत्नी हमेशा पूजा-पाठ किया करते, व्रत करते, उपवास करते, पुराण सुनते।

न्यायाधिकारी काफ़ी देरी से घर आया करता। यह जानकर गोविन्द ने बहुत देर होने से पहिले ही अपना काम कर देना चाहा। वह न्यायाधिकारी के घर में घुसा।

"मुझे बड़ी भूख लग रही है। मैं देखूँगा कि खाने के लिए कुछ मिलता है कि नहीं।" देव ने कहा।

"मैं ऊपर जाकर देखूँगा कि कुछ पैसा-वैसा भी है कि नहीं। अगर मैं पहिले आया तो इस पेड़ के नीचे रहूँगा।

वीरेन्द्र

अगर तुम पहिले आओ तो तुम भी वहीं रहना। दोनों मिलकर घर चलेंगे।" गोविन्द ने कहा।

गोविन्द ऊपर कोठे में गया। देव भी घर में घुसा। बाहर का दरवाजा बन्द था। देव ने अन्दर जाकर फिर दरवाजा बन्द कर दिया, ताकि यदि कोई आये तो उसे मालूम हो सके।

वह बिल्ली की तरह रसोई के कमरे में गया। अन्दर झाँककर देखा। घर में सब कुछ शान्त था। न्यायाधिकारी की पत्नी रसोई घर में लेटी ऊँघ रही थी। और देवता की मूर्ति के सामने पकवान रखे हुए थे। उनकी सुगन्ध पाते ही देव का जी ललचा उठा।

असली बात यह थी कि उस दिन एकादशी थी, न्यायाधिकारी और उसकी पत्नी ने दिन भर उपवास किया था। रात के भोजन, खीर, आठ पूरियाँ और साथ खाने के लिए कुछ साग बनाकर घरवाली, पति के आने की प्रतीक्षा कर रही थी। क्योंकि उपवास किया था, इसलिए कमज़ोरी के कारण उसकी आँख लग गई।

देव पकवानों के पास गया और पूरियाँ खाने लगा। यूँ तो भूखा था ही और पूरियाँ भी अच्छी बनी थीं इसलिए जब तक उसने सारी पूरियाँ न खालीं, तब तक न रुका। यदि कुछ और पूरियाँ होतीं, तो उन्हें भी खाता। फिर उसने सारी खीर पी डाली। उसके लिए वह अमृत-सी थी। ऐसी खीर उसने कभी न खायी थी।

देव की भूख पूरी तरह मिट गई। वह जिस रास्ते आया था, उस रास्ते जाने की कोशिश कर रहा था कि बाहर दरवाजे पर किसी की आवाज़ सुनाई दी—"दरवाजा खोलो, दरवाजा खोलो।"

यह सुन घरवाली उठी। "आयी, आयी।" कहती वह निकली। वह आनेवाला घरवाला ही होगा। भोजन के लिए रसोई में ही आयेगा। कहीं और जा नहीं सकता था, इसलिए देव अटारी पर चढ़कर बैठ गया।

जैसा उसने सोचा था, घर का मालिक अपनी पत्नी के साथ रसोई घर में आया— "कुछ बनाया है न, बड़ी भूख लग रही है।"

"कभी का बना दिया है। मैं यह देखती बैठी रही कि आप कब आते हैं। कहकर घरवाली ने मूर्ति की ओर देखा। वहाँ खाली बर्तन पड़े थे। "अरे, जो कुछ मैंने खाने को बनाया था, वह कहाँ गया?"

"और क्या हुआ होगा, भूख लगी होगी। तुम मेरी प्रतीक्षा कर नहीं पायी, तुम ही खा गई होगी।" पति ने कहा। पत्नी ने कितने ही प्रेम से उन्हें बनाया था। वह खौल उठी।

"मैं? कभी मैंने आपके खाने से पहिले कुछ खाया है? मैंने खाया है कि नहीं, देव जानते ही हैं।" पत्नी ने कहा।

"यदि तुमने नहीं खाया, तो किसने खाया है? यहाँ भला कौन आयेगा?" पतिने पूछा।

"मैं जरा सो गयी थी। उस समय देव ने (यानि देवता की मूर्ति ने) खा लिये होंगे।" पत्नी ने कहा।

"जब तक देहशुद्धि नहीं हो जाती, तब तक तुम सच नहीं बताओगी।" कहकर पति एक डंडा ले आया।

देव को, जो यह सब देख रहा था, उस पति को देखकर बड़ा गुस्सा आया। वह अटारी पर से पति-पत्नी के बीच में

कूदा। उसने पति से कहा—"उसने सच ही कहा है। मैं देव हूँ। मैंने, तुम दोनों के लिए जो बनाया गया था, खा लिया है। क्यों तुम उसे बेकार मारते हो!" पति लम्बा मुँह किये, देव की ओर देख रहा था।

इतने में बाहर से धीमे से आवाज़ आई—"देव!"

"हाँ, आ रहा हूँ।" देव शान से कदम रखता बाहर चला गया।

गोविन्द ने सारी जगह छान डाली। पर चोरी करने के लिए उसे कुछ न मिला। थोड़ी देर उसने अपने भान्जे के लिए इन्तज़ार की, फिर रसोई की ओर से उसे कुछ शोर सुनाई दिया। जब वह पास आया, तो उसे देव की भी बात सुनाई पड़ी। गोविन्द ने इस भय से कि कहीं उसके भान्जे को घरवालों ने पकड़ न लिया हो, उसको धीमे से पुकारा। उसे यह सुन और भी अचरज हुआ कि देव कह रहा था कि वह आ रहा है। वे दोनों जब अपने गाँव वापिस जा रहे थे तो उसके भान्जे ने जो कुछ गुज़रा था, सुनाया। गोविन्द ने कहा—"चोर तो तुम हो। चोरी करके कह भी आये कि चोरी की है।" गोविन्द ने उसकी खूब प्रशंसा की।

देव के जाने के कुछ देर बाद, न्यायाधिकारी की पत्नी ने कहा—"आप देख क्या रहे हैं? वह चोर है, उसे पकड़िये न।"

तब न्यायाधिकारी जल्दी जल्दी भागा बाहर गया। पर तब तक चोर बहुत दूर चले गये थे। इसके बाद न्यायाधिकारी की पत्नी ने कुछ और बनाया। दोनों ने उसे खाकर तसल्ली कर ली।

भेद

★

दो भाइयों में झगड़ा हुआ, वे न्यायाधिकारी के पास फैसले के लिए गये। उनमें एक लखपति था और दूसरा कतई गरीब।

"तुम दोनों एक ही पिता के लड़के हो, फिर यह कैसे हुआ कि एक के पास लाखों रुपया है और दूसरे के पास कौड़ी भी नहीं है!" न्यायाधिकारी ने पूछा।

"पाँच साल पहिले हम दोनों ने अपने पिता की सम्पत्ति बराबर बाँट ली थी। दोनों को पचास हज़ार रुपये मिले। मेरा भाई, यह सोच कि वह धनी था, यूँ ही समय व्यर्थ करने लगा। अगर कोई काम आता तो वह अपने नौकरों से कहता—"तुम जाकर यह काम करो।" वह नौकरों को ही आज्ञा देता था। मेरे यहाँ भी नौकर हैं। मैं भी उनको काम देता हूँ पर उनको कभी मैं अपना काम नहीं सौंपता। "आओ, हमें यह काम करना है।" मैंने नौकरों को हमेशा आने के लिए कहा, जाने के लिए कभी न कहा। हम दोनों में इतना भेद है, तो इस कारण के सिवाय और कोई कारण नहीं है। बस मैं यही कह सकता हूँ।"

सत्य की महिमा

सत्यशील नवनीतपुर का राजा था। वह अपने नाम को सार्थक करता-सा सत्य और धर्म का पालन करता, जीवन निर्वाह कर रहा था। कहा जाता था, सत्यशील के घर में लक्ष्मी, कीर्ति, धर्म और पवित्रता, वास कर रही थीं।

यह सोचकर कि व्यापार यदि बढ़ा, तो देश की समृद्धि बढ़ेगी, सत्यशील ने एक क्रम शुरु किया। सवेरे सवेरे जब कोई उसके महल के आहाते में बेचने के लिए जो कुछ लाता, जिस दाम पर वह बेचता खरीद लेता। वे व्यापारी जिनको व्यापार में नुक्सान होता था, या जिनका माल न बिकता था, अपने माल को राजा के पास ले जाते और उसे वह माल बेचकर अपना नुक्सान पूरा कर लेते।

नवनीतपुर में एक बड़ा गरीब ब्राह्मण था। उसने बहुत कोशिश की, पर गरीबी ने उसे छोड़ा नहीं। "गरीबी भी मुझे एक ऐसे माल की तरह चिपकी हुई है, जिसे कोई खरीदता न हो। इसे मैं राजा को क्यों न बेच दूँ?" ब्राह्मण ने सोचा। वह अपने दारिद्र्य के चिन्ह स्वरुप फटे कपड़े, कम्बल, घिसी चप्पल का एक गठ्ठर बनाकर उसे सिर पर रखकर, सवेरा होने से पहिले ही वह राजा के महल के आहाते में चिल्लाने लगा—"दारिद्र्य, दारिद्र्य, क्या कोई खरीदेगा?"

राजा ने उसका चिल्लाना सुनकर कहा—"शायद कोई कुछ बेचने आया है। मेरे पास बुलाकर लाओ।" सिपाही को भेजा। ब्राह्मण ने गठ्ठर उतारकर कहा—"मेरे पास जो कुछ है, मैं उसे बेच रहा

रामानन्द

हूँ।" उसने गठ्ठर खोला। "इस गठ्ठर में क्या है?" राजा ने पूछा।

"दारिद्र्य महाराज, मेरा अपना दारिद्र्य।" ब्राह्मण ने कहा।

राजा ने एक क्षण सोचा। ब्राह्मण, जैसा व्यापार किया जाता था, वैसा ही कर रहा था। कोई भी व्यापारी अपनी ऐसी चीज़ को ही तो बेचता है, जिसका वह स्वयं उपयोग नहीं करता। ब्राह्मण भी वैसा ही माल बेच रहा है। उसे खरीदना मेरा धर्म है। राजा ने सोचा। उसने ब्राह्मण से पूछा—"तुम अपने दारिद्र्य को कितने में बेचते हो?"

"मैं पाँच सौ मुहरों में बेचूँगा।" ब्राह्मण ने कहा। उसने पहिले ही सोच लिया था कि यदि उसे इतना धन मिल गया तो वह स्वयं अपना व्यापार शुरु कर सकता था। राजा ने ब्राह्मण को पाँच सौ मोहरें दिलवा दीं और फटे कपड़ों को अपने गोदाम में डलवा दिया।

उस दिन रात को जब राजा सो रहा था, तो सपने में कोई देवी-सी स्त्री उसके घर से बाहर जाती उसके पास आयी। "कौन हो तुम? कब हमारे घर आयी थी? क्यों जा रही हो?" सत्यशील ने उससे पूछा।

"मैं लक्ष्मी हूँ। अब तक मैं तुम्हारे घर में बड़े आराम से रहती आयी थी। पर अब तुमने दारिद्र्य को लाकर घर में रखा है। इसलिए मैं अब इस घर में नहीं रहना चाहती।" उसने कहा।

"तुम्हारी इच्छा। बिना कारण तुम जाओगी नहीं। मैं कोई आपत्ति नहीं कर सकता।" सत्यशील ने कहा।

लक्ष्मी के जाते ही उसे एक और स्त्री दिखाई दी। उसे भी बाहर जाता देख, उसने उससे भी वे ही प्रश्न किये, जो लक्ष्मी से किये थे।

"मैं धर्म हूँ। लक्ष्मी के चले जाने के बाद मेरे रहने में कोई लाभ नहीं है। लक्ष्मी थी, इसलिए ही तुम मुझे इतने दिन रख सके।" धर्म ने कहा।

इसी तरह न्याय ने भी जाते हुए कहा—"जहाँ धर्म नहीं है, वहाँ न्याय भला कैसे रहेगा?" इसके बाद, कीर्ति भी राजा से विदा लेकर चली गई।

सत्यशील सोच ही रहा था कि वे सब देवी देवता, जिनका वह आदर करता था, उसको छोड़कर चले गये थे कि एक और देवता आया। "तुम कौन हो? क्यों जा रहे हो?" सत्यशील ने पूछा। "मैं सत्य हूँ। सब के चले जाने के बाद यह सोच कि जो आदर तुम अब तक मेरे प्रति दिखाते आ रहे थे, वह न दिखा सकोगे, मैं जा रहा हूँ।" उस देवता ने कहा।

"तुम रहो, तो काफ़ी है, यह सोचकर मैंने औरों को जाने दिया था। उनका जाना ठीक था। पर तुम्हारा जाना ठीक नहीं है। यदि तुम्हें विश्वास न हो, तो न्याय से पूछ आओ।" सत्यशील ने कहा।

"तुम्हारी वजह से मेरा कुछ नहीं बिगड़ा है। इसलिए जब तक तुम चाहोगे, तब तक मैं रहूँगा।" सत्य यह कहकर वापिस चला गया। थोड़ा समय बीता। राजा ने देखा कि वे सब देवी देवता फिर झुन्ड बनाकर वापिस आ रहे थे।

"तुम सब नाखुश होकर चले गये थे न? क्यों वापिस आ रहे हो?" राजा ने उनसे पूछा।

"सत्य जहाँ है, वहाँ हमें रहना ही पड़ेगा हमने सोचा था कि हमारे साथ सत्य भी चला आयेगा। वह न आया। इसलिए हम ही सत्य के पास आये हैं।" उन्होंने कहा।

अवीक्षित

किसी जमाने में करन्ध नाम का राजा हुआ करता था। उसने वीर्यचन्द्र राजा की लड़की वीरा से विवाह किया। इनके एक लड़का हुआ। ज्योतिषियों ने बताया कि उसकी जन्मपत्री में कुछ भी ऐसा न था, जो किसी नक्षत्र के दुष्प्रभाव का परिणाम हो। करन्ध ने अपने लड़के का नाम अवीक्षित रखा।

अवीक्षित बड़ा हुआ। उसने समस्त विद्यायें सीख लीं। जहाँ जहाँ राजकुमारियों का स्वयंवर होता, वह जाता। प्रति राजकुमारी उसे ही चुनती। स्वयंवरों में, अवीक्षित से, वीरा, गौरी, सुभद्रा, लीलावती, दारिता, मूल्यवती, कुमुद्वती, राजकुमारियों ने विवाह किया।

इतने में विशाला नाम की राजकन्या के स्वयंवर का प्रबन्ध हुआ। अनेक राजकुमारों के साथ अवीक्षित भी गया। इस स्वयंवर में आये हुए राजकुमारों को अवीक्षित को देखकर ईर्ष्या हुई। उन्होंने सोचा कि विशाला भी उससे ही शादी करेगी। इसलिए उन सबने मिलकर अवीक्षित पर हमला किया और उसे बन्दी बना लिया। क्योंकि यह घटना हुई थी, इसलिए विशाला ने और राजकुमारों में से किसी को चुनने से इनकार कर दिया। स्वयंवर स्थगित कर दिया गया।

यह जानकर कि और राजकुमारों ने उसके लड़के के साथ अन्याय किया था, करन्ध अपनी सेना लेकर निकल पड़ा। उन राजकुमारों से युद्ध करके अवीक्षित को छुड़ा लाया। राजकुमारी विशाला भी उससे विवाह करने के लिए तैयार हो गई। परन्तु विशाला से विवाह करने के

अमिताभ

लिए अवीक्षित ही नहीं माना। अजीब बात तो यह थी कि वह विशाला को प्रेम करने लगा था, पर चूँकि उसके देखते देखते वह बन्दी बना लिया गया था, इसलिए उसने उससे विवाह न करने का हठ किया। करन्ध और करता भी तो क्या करता, उसे घर ले गया।

अवीक्षित का हठ इतने पर भी कम न हुआ। उसने घर आकर, अपनी पत्नियों से भी गृहस्थी न की, ब्रह्मचर्य का व्रत ले लिया और उधर विशाला चूँकि वह अवीक्षित से विवाह न कर पाई थी, इसलिए उसने

विवाह करने से ही इनकार कर दिया। इस जन्म में तपस्या करके अगले जन्म में ही उससे शादी करूँगी, यह माँ बाप से कह वह वन में चली गई।

करन्ध बूढ़ा हो रहा था। उसके अवीक्षित के सिवाय कोई और लड़का न था और वह ब्रह्मचर्य कर रहा था, कहीं ऐसा न हो कि उनका वंश अवीक्षित से ही समाप्त हो जाये, उसकी पत्नी वीरा ने एक उपाय सोचा। उसने अवीक्षित को बुलाकर कहा—"बेटा, मैंने किमिच्छत व्रत करने का निश्चय किया है। उस व्रत के समय, जो कोई जिस किसी चीज़ की इच्छा प्रकट करे, उसे तुम देते रहो। नहीं तो मेरा व्रत भंग हो जायेगा।" अवीक्षित इसके लिए मान गया। उसके व्रत शुरु करते ही पुरोहित ने कहा—"जिसको जो कुछ चाहिये वह अवीक्षित से ले सकता है।"

तब करन्ध ने लड़के के पास आकर कहा—"बेटा, मुझे पोता चाहिये।" क्योंकि उसने माँ को वचन दिया था, इसलिए अवीक्षित ने ब्रह्मचर्य व्रत छोड़ दिया और फिर गृहस्थी हो गया।

इसके कुछ दिनों बाद, वह जंगल में शिकार पर गया। वहाँ उसने आर्तनाद सुना। कोई स्त्री चिल्ला रही थी— "बचाओ, बचाओ, मैं अवीक्षित की पत्नी हूँ।" यह सुन अवीक्षित को बड़ा आश्चर्य हुआ। उसने जाकर जब देखा, तो एक राक्षस, एक स्त्री को पकड़े हुए दिखाई दिया। अवीक्षित ने उस राक्षस को मार कर उस स्त्री की रक्षा की।

तब वहाँ कुछ देवता आये। उसके कार्य की प्रशंसा करते हुए उन्होंने कहा— "तुम इससे विवाह करो। तुम्हारे पिता ने तुमसे सन्तान माँगी है। उससे तुम्हारे एक लड़का होगा।

"मैंने विशाला को चाहा है, उसके अलावा मुझे और कोई नहीं चाहिये।" अवीक्षित ने कहा।

"पगले, यह ही विशाला है।" देवताओं ने कहा। तब उन दोनों ने आपस में एक दूसरे के बारे में कहा और आखिर विवाह करने का निश्चय किया। विशाला को लेकर जब अवीक्षित नगर वापिस आ रहा था, तो एक गन्धर्व राजा मिला। "बेटा, यह विशाला पहिले जन्म में मेरी लड़की थी। तुम दोनों मेरे नगर में आकर विवाह कर लो।" वे मान गये और गन्धर्व राजा के साथ गये। उसने उन दोनों का स्वयं विवाह किया और उन्हें कुछ समय तक अपने घर में रखा।

विशाला गर्भवती हुई और कुछ दिनों बाद उसके एक लड़का हुआ। उसका नाम उन्होंने मरुत रखा। फिर अवीक्षित, अपनी पत्नी और लड़के के साथ पिता के पास गया।

एक दिन करन्ध ने अवीक्षित से कहा— "बेटा, मैं जंगल में जाकर तपस्या करना चाहता हूँ। तुम राज्याभिषेक कर लो।"

"मैं एक समय साथ के राजकुमारों द्वारा हरा दिया गया था इसलिए मैं राज्य करने के योग्य नहीं हूँ।" अवीक्षित ने कहा।

पिता ने कई तरह से कहकर देखा। अवीक्षित हठ छोड़नेवाला न था। आखिर उसने पिता से कहा—"आप चाहे तो मेरे लड़के मरुत का पट्टाभिषेक करके राज्यभार उसपर डालकर तपस्या के लिए चले जाइये।"

मरुत के राजा होने के बाद अवीक्षित भी वन में तपस्या करने चला गया।

मरुत जब राज्य कर रहा था, तो मुनियों को साँप बहुत तंग करने लगे। यह सुन, मरुत ने नाग लोक पर संवर्तास्त्र का उपयोग किया और साँपों को नष्ट करने लगा। साँपों ने आकर विशाला से शिकायत की।

जब वह तपस्या कर रही थी, एक दिन वह गंगा में स्नान करने गई। तब उसे नागराज नाग लोक ले गया। उसका खूब आतिथ्य किया। इस कारण विशाला को साँपों पर कुछ अभिमान था।

इसलिए विशाला ने अपने पति के पास जाकर कहा—"आप मरुत से कहिये कि वह नाग हत्या न करे।" अवीक्षित ने लड़के से यही कहा। परन्तु मरुत अपने हठ पर रहा।

इसपर क्रुद्ध हो, अवीक्षित लड़के से ही युद्ध करने के लिए तैयार हो गया। तब मुनियों ने आकर कहा—"तुम क्यों आपस में लड़ते हो? अब हमें साँपों का भय नहीं है। साँपों को भी मृत्यु का डर नहीं।" कहकर पिता-पुत्र में सन्धि करवा दी।

लड़के के क्षमा माँगने पर, अवीक्षित फिर तपस्या करने के लिए वन में चला गया।

गली में नागरिक दयनीय दृष्टि से देख रहे थे। कुछ रथ के पीछे भाग रहे थे। कुछ रथ को पकड़े लटक रहे थे।

कुछ ने रथ के सामने आकर सुमन्त्र से कहा—"न मालूम हम फिर कब इन्हें देखेंगे। रथ ज़रा धीमे धीमे जाने दो।"

दशरथ ने यकायक कहा—"मुझे राम को देखना है।" कहकर अपने घर से गली में आकर खड़े हो गये। उनके साथ उनकी पत्नियाँ भी भागने लगीं।

"सुमन्त्र, रथ ज़रा रोको।" दशरथ चिल्लाये। वे कुछ दूर भागे।

राम, जो पीछे मुड़कर देख रहे थे, यह न सह सके। उन्होंने सुमन्त्र से कहा—"रथ ज़रा तेज़ी से चलाओ। यह दुःख मुझे कितनी देर देखना होगा! कैसे देखूँ! अगर महाराजा पूछें तो कह देना कि लोगों के शोर में उनकी आवाज़ सुनाई न पड़ी थी।"

राम के पीछे आनेवालों से विदा लेने पर, सुमन्त्र घोड़ों को तेज़ी से हाँकने लगा। घोड़े भी जाते झिझक रहे थे।

दशरथ से मन्त्रियों ने कहा—"यदि आप चाहते हैं कि वे जल्दी वापिस आयें, तो आपको अधिक दूर उनको छोड़ने नहीं जाना चाहिए।"

दशरथ का सारा शरीर पसीना पसीना हो रहा था। वे मन्त्रियों के साथ वहीं
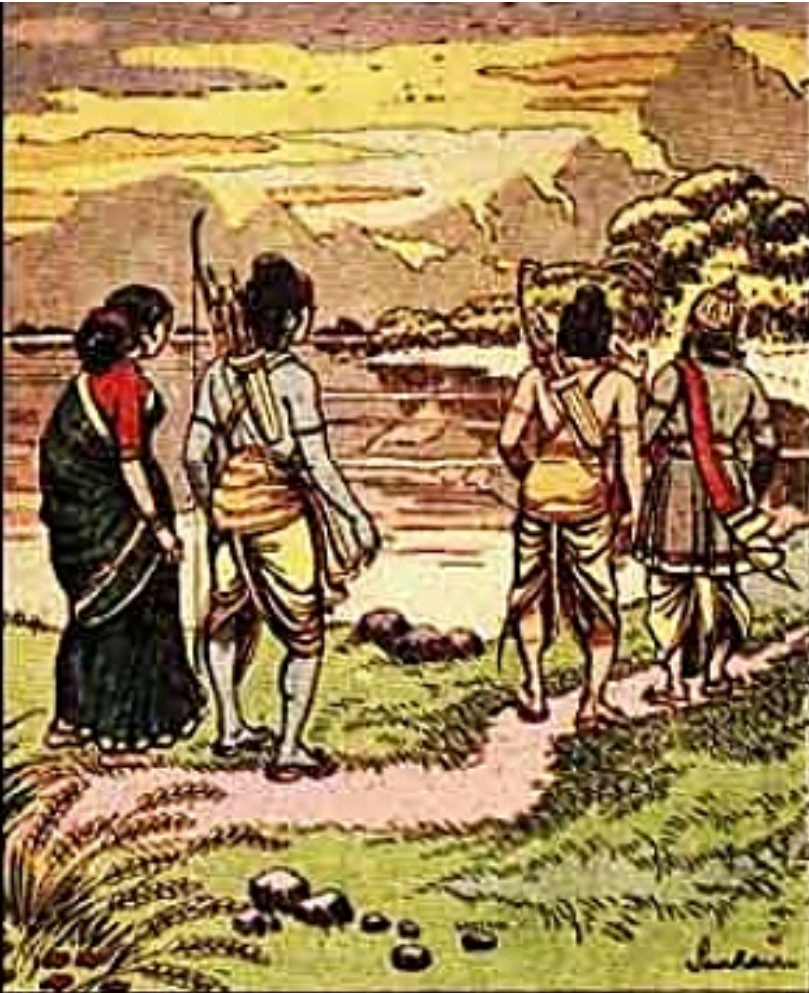
खड़े हो गये और रथ के ओझल होने तक देखते रहे।

राम के बनवास चले जाने पर दशरथ का अन्तःपुर रोदन-क्रन्दन से गुँजित होने लगा। अयोध्या भी उजड़ी उजड़ी-सी लगने लगी। जो काम जैसा था, वैसा ही पड़ा रहा। लोगों ने इस तरह अनुभव किया जैसे कोई उपद्रव हो गया हो।

दशरथ राम के पीछे कुछ दूर गये और फिर गिर गये। कौशल्या और कैकेयी ने बाँह पकड़कर उन्हें उठाया। दशरथ ने कैकेयी से कहा—"मुझे न छुओ। मैं तुम्हारा पति नहीं हूँ, मैंने तुम्हें छोड़ दिया है। यदि तुम्हारे पुत्र ने मेरा श्राद्ध पिण्ड किया, तो वे मुझे न मिलेंगे।" वे राम के लिए रोते रोते कौशल्या के घर चले आये।

सुमित्रा ने आकर कौशल्या और दशरथ को आश्वासन दिया।

सूर्यास्त होते होते राम और लक्ष्मण का रथ तमसा नदी के तट पर पहुँचा। नगरवासी वहाँ तक रथ के पीछे आते ही रहे। वे राम के बनवास पर जाने के लिए रोते रहे। राम ने उन्हें बहुत समझाया, पर उन्होंने न सुना।

सुमन्त्र ने घोड़े खोल दिये। उन्हें धोकर पानी पिलाया। नदी के किनारे घूमने दिया। फिर उन्हें बाँधकर दाना खिलाया। लक्ष्मण और सुमन्त्र ने राम और लक्ष्मण के लिए पत्तों का बिस्तर लगाया। वे उस पर सो गये। सुमन्त्र और लक्ष्मण ने बातें करते करते सारी रात काट दी।

राम के साथ जो लोग आये थे वे भी नदी के किनारे सो गये। सवेरा हो रहा था कि राम उठे। जो लोग घरबार

छोड़कर, पेड़ों के नीचे सो रहे थे उनको देखकर लक्ष्मण से कहा—"इन सब के उठने से पहिले ही हमारा रथ पर सवार होकर चले जाना अच्छा है। नहीं तो ये हमें नहीं छोड़ेंगे। हमारे साथ ही चले आयेंगे।"

सुमन्त्र रथ तैयार करके लाया। राम ने सुमन्त्र से कहा—"तुम रथ को चारों ओर घुमाकर लाओ। तब लोग यह नहीं जान सकेंगे कि हम किस तरफ़ गये हैं।" सुमन्त्र उनके कहे अनुसार रथ घुमाकर लाया। सीता, राम, लक्ष्मण उसमें सवार होकर उत्तर दिशा की ओर चल दिये।

लोगों ने सवेरे उठकर देखा कि वहाँ रथ न था। सीता, राम, लक्ष्मण भी न थे। वे अपनी नींद और शरीर को कोसते, जिनके कारण वे समय पर न उठ पाये थे, अयोध्या की ओर वापिस चल दिये।

जब प्रातःकाल हुआ तो राम का रथ बहुत दूर चला गया था। वे दक्षिण कोशल देश को पार करके, कोशल के दक्षिण में बहनेवाली गंगा नदी के पास

पहुँचे। शृंगिवेरपुर के पास सुमन्त्र ने एक बड़े पेड़ के पास रथ रोका। घोड़े खोल दिये। उनको दाना चाना दिया। सीता, राम, लक्ष्मण, उसी पेड़ के नीचे आराम से बैठ गये।

इतने में जंगलियों के राजा, गुह जो राम का मित्र था, यह जानकर कि राम आये हुए थे, अपने मन्त्रियों और मुखियों के साथ उन्हें मिलने आया।

उसे दूरी पर देख, राम, लक्ष्मण को साथ लेकर उससे मिलने गये। उसको गले लगा लिया।

मुझे वल्कल पहिनकर वनवास करना ही होगा।"

रात, राम और सीता वहीं पेड़ के नीचे सो गये। लक्ष्मण उनकी रखवाली कर रहा था। उससे गुह ने कहा—"बेटा, तुम भी सोओ। सवेरे तक मैं तुम्हारी रक्षा करूँगा। हम तो जंगल में रहते हैं, हमारी तो यह आदत ही है।" परन्तु लक्ष्मण न माना। वह रात भर गुह से जो कुछ गुज़रा था, उसके बारे में बातें करता रहा। सब सुनकर गुह बड़ा चिन्तित हुआ।

रात गुज़र गई। अगले दिन सवेरे कोयल की कूक और मोरों की आवाज़ के कारण वे उठे।

राम ने लक्ष्मण से कहा—"सूर्योदय हो रहा है। चलो हम गंगा पार करें।" लक्ष्मण जंगलियों के राजा गुह और सारथी सुमन्त्र को बुलाकर लाया। राम ने गुह से कहा कि वे गंगा नदी पार करना चाहते थे। गुह ने अपने आदमियों को खबर दी कि वे गंगा पार करने के लिए अच्छी नौकाएँ तैयार रखें।

गुह ने व्यथित स्वर में कहा—"इसे ही अयोध्या समझो। यह हमारा भाग्य है कि तुम हमारे अतिथि होकर आये।"

फिर गुह ने राम, लक्ष्मण और सीता के लिए अच्छा भोजन बनवाया। "राम, तुम्हें किसी चीज़ की कमी न होगी, तुम ही इस राज्य का परिपालन करो।" राम ने गुह को छाती से लगाकर कहा—"गुह तुम मेरे लिए पैदल चलकर आये हो, यही मेरे लिए काफ़ी है और क्या चाहिए। तुम ही अपना राज्य रखो।

राम ने सुमन्त्र से कहा—"अब तुम अयोध्या वापिस चले जाओ। हमारे माता पिता से हमारा शुभ क्षेम कहना और कहना कि चौदह साल होते ही हम वापिस आ जायेंगे। फिर भरत को मामा के यहाँ से बुलवाकर राज्याभिषेक करवाओ।"

सुमन्त्र ने कहा—"मुझे ऐसा लग रहा है कि मैं रणभूमि से जैसे कोई सारथी योद्धा के गिर जाने पर, खाली रथ ले जा रहा हूँ। मैं इस रथ को, जिस पर आप तीनों को सवार करके लाया था, खाली ले गया तो लोगों का दिल फूट न पड़ेगा? खाली रथ ले जाकर आपकी माताओं को कैसे मैं अपना मुंह दिखाऊँ? मैं भी चौदह वर्ष आपके साथ रहूँगा, शिकार करके आपको देता रहूँगा।"

"नहीं भाई, यदि तुम यहीं रहे तो कैकेयी और पिता जी को कैसे मालूम होगा कि हमने उनकी आज्ञा पालन की है। इसलिए तुम्हें वापिस जाना ही होगा।" राम ने कहा।

राम की इच्छा पर गुह बड़ का दूध लाया। उससे राम लक्ष्मण ने अपनी जटायें मुनियों की तरह बांध लीं।

लक्ष्मण ने पहिले सीता को नौका में बिठाया, फिर स्वयं बैठ गया। राम गुह से विदा लेकर अन्त में बैठे। गुह के बन्धुओं ने चप्पू चलाकर नाव चलाई।

जब नौका प्रवाह में थी तो सीता ने गंगा को नमस्कार करके कहा—"गंगा देवी जी, मैं चौदह वर्ष बाद सक्षेम वापिस आऊँगी तो ब्राह्मणों को लाख गौवें, वस्त्र आदि दान दूँगी। अन्न दूँगी। तुम्हारे तीर पर जितने भी मन्दिर हैं, उनमें माथा

टिकाऊँगी। हमें आशीर्वाद दो कि हम सुरक्षित वापिस आ जायें।"

जल्दी ही नाव गंगा के पार चली गई। सीता, राम, लक्ष्मण ने वत्स देश में कदम रखा। वे पैदल निकल पड़े। पहिले लक्ष्मण था, उसके पीछे सीता और सीता के पीछे राम। इस तरह वे पैदल चल रहे थे।

और इस पार, सुमन्त्र जब तक वे ओझल न हो गये, तब तक उनको लगातार देखता रहा। फिर उसके आँखों में आँसू तैरने लगे।

राम लक्ष्मण ने उस दिन शिकार करके अपनी भूख मिटाई। वे रात को एक पेड़ के नीचे गये। राम कुछ इधर उधर की बातें करने लगे।

वनवास की यही पहिली रात थी। यहाँ से सुमन्त्र भी साथ न होगा। बिना सोये राम और लक्ष्मण को, सीता की रक्षा करनी होगी। अब दशरथ न जाने कितनी दुखी होंगे। मगर कैकेयी बड़ी खुश होगी। दुष्टा, भरत को राजा बनाने के लिए कहीं राजा को मार तो न देगी! धर्म, अर्थ, काम में शायद काम ही सबसे अधिक बलवान है। नहीं तो क्या कोई पिता अपने लाड़ले लड़के को यों वन में भेजेगा! भरत सुख से राज्य करेगा! यह कैकेयी ही दशरथ के दुःख की और मुझे वनवास भेजने की कारण है। नीच कहीं की, माँ ने कभी किसी जन्म में माँ पुत्र को अलग किया होगा। चाहे तो अयोध्या ही क्या सारा संसार जीत सकता हूँ! पिता की बात पर धर्म के लिए पट्टाभिषेक ही ठुकरा दिया।

राम सो न सके। उनको आँसू बहाते इस तरह बातें करता देख, लक्ष्मण ने

उनको आश्वासन दिया। इन बातों से राम का ढाढ़स बँधा, वनवास की इच्छा और दृढ़ हो गयी। पास ही में बढ़ के पेड़ के नीचे पत्ते बिछाकर, लक्ष्मण ने बिस्तर तैयार कर दिया था। सीता, राम वहीं सो रहे।

प्रातःकाल होते ही तीनों गंगा, यमुना के संगम प्रयाग की ओर चल दिये। वहीं भरद्वाज मुनि का आश्रम था। जब वे उनके आश्रम में पहुँचे तो सूर्यास्त हो गया था। राम ने भरद्वाज से संक्षेप में अपनी कहानी सुनाई।

"हाँ, सुना है कि निष्कारण तुम्हारे पिता ने तुम्हें वन में भेजा है। तुम यहाँ आये हो, इसलिए मैं तुम्हें देख सका। इसी आश्रम में एक पर्णशाला बनाकर, यहीं चौदह वर्ष काट दो। यहाँ सुखपूर्वक रह सकोगे। यह प्रदेश भी बड़ा पवित्र है।" भरद्वाज ने कहा।

यह सुन राम ने कहा—"मुनीन्द्र! यदि हमारे लोगों को मालूम हो गया कि हम किस आश्रम में हैं, तो वे हमें देखने आते रहेंगे। इसलिए दूर यदि हमारे रहने लायक जगह हो तो बताइये। सीता पिता के घर बड़े आराम से पली है। यदि आप कोई ऐसा रम्य स्थल बतायेंगे, जो देखने में सुन्दर हो, हम वहाँ जाकर रहेंगे।"

"यदि यहाँ न रहना चाहो तो यहाँ से दस कोस की दूरी पर चित्रकूट नाम का पर्वत है। वह बहुत सुन्दर प्रदेश है। उस पहाड़ पर बन्दर, लंगूर और भालू हैं। कई हज़ार वर्षों से वहाँ ऋषि तपस्या करते आ रहे हैं। वहाँ आश्रम बना सकते हो।" भारद्वाज ने कहा।

रंगून का पगोड़ा

यह संसार में सबसे अधिक प्रसिद्ध बौद्ध मन्दिर है। यहाँ बुद्ध के आठ केश सुरक्षित हैं। इसका निर्माण १५६४ में पूरा हुआ था। इसकी ऊँचाई ३६७ फीट है। इसके नीचे के चबूतरों की लम्बाई दो फर्लान्ग है। २५ वर्ष में एक बार सोना पोता जाता है। इसके शिखर पर १५०० छोटे छोटे सोने और चान्दी के घंटे लगे हुए हैं।

१. बृजेन्द्रमणि त्रिपाठी, पहिले पार

क्या आपके यहाँ से "चन्दामामा" के अलावा भी कोई और पत्रिका छपती है?

अभी तो नहीं भाई।

२. रामेन्द्रकुमार, हिंगनघाट

क्या आपने फरवरी से चित्र कथा छापना बन्द कर दिया है?

हाँ।

३. पुन्जीतसिंह सिक्ख, प्रतापनगर, चित्तौड़गढ़

क्या "भयंकर घाटी" नामक धारावाहिक उपन्यास पुस्तक रूप में छप गया है?

अभी नहीं। अभी तो यह "चन्दामामा" में भी पूरा नहीं हुआ है।

४. रफीक महमद मठान, चाकसू

यदि कोई "चन्दामामा" का चार वर्ष के लिए ग्राहक बनना चाहे तो आप चन्दे में रियायत कर सकते हैं?

रियायत का क्रम फिलहाल नहीं है।

५. रामस्वरूप सोनी, कपूरथला

क्या आप "चन्दामामा" में झाँसी की रानी और रवीन्द्रनाथ टैगोर की कहानी प्रकाशित करने का कष्ट कर सकते हैं?

हाँ, यथा समय, सुविधानुसार अवश्य करेंगे।

६. चान्दखान, तखत गट

आप "चन्दामामा" में फिल्म प्रतियोगिता का रहस्य क्यों नहीं छापते, आप छापेंगे कि नहीं?

"चन्दामामा" फिल्मी पत्रिका नहीं है। इसलिए हम छापेंगे भी नहीं।

७. प्रेमपदजन, डालटेव गेप

प्रति माह कितने "चन्दामामा" छपते हैं।

छः संस्करणों में कुल मिलाकर दो लाख तीस हजार।

८. किशोरकुमार अग्रवाल, पटना

"चन्दामामा" का मुखपृष्ठ किस कथा का होता है?

आजकल रामायण का है।

९. नारायण की लालगनी, बम्बई

आप "चन्दामामा" में विलियम शेक्सपीयर की कहानियाँ क्यों नहीं छापते?

हम लगभग शेक्सपीयर की सभी नाटक कथा रूप में प्रकाशित कर चुके हैं। पुराने अंक टटोलिये, मिल जायेंगे।

आप "चन्दामामा" में नाटक क्यों नहीं प्रकाशित करते?

क्योंकि "चन्दामामा" कहानियों की पत्रिका है।

क्या "चन्दामामा" केवल माताओं और बच्चों के लिए है?

उनके लिए तो है ही और उन सब के लिए भी है जो इसे पढ़ना चाहते हैं।

१०. शशिकान्त महाजन, झरिया

"चन्दामामा" की प्रति डाक या वी. पी. भी द्वारा ग्राहकों के पास भेजी जाती है?

वी. पी. पी. द्वारा नहीं भेजी जाती। डाक द्वारा तो जाती ही है।

Photo by S. H. Kotak

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

सब से मेरा भाईचारा,
रहती हूँ स्वच्छन्द !

प्रेषक :
सुशीलकुमार राजपाली, झाँसी

Photo by K. M. Panjaba
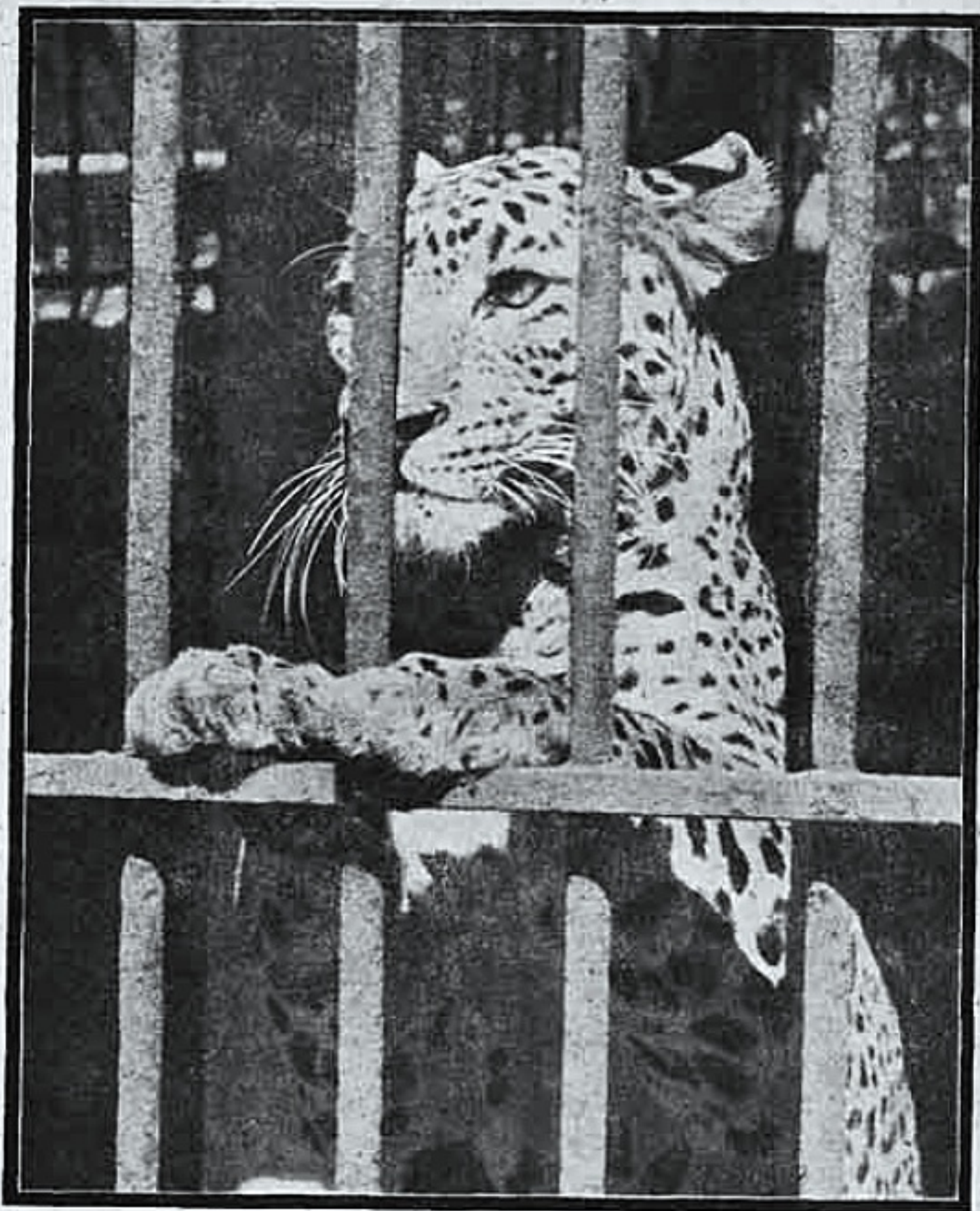
पुरस्कृत
परिचयोक्ति

तुम करते मनमानी हरदम,
इसीलिए हो बन्द !!

प्रेषक :
सुशीलकुमार राजपाली, झाँसी

अनाड़ी का शिकार
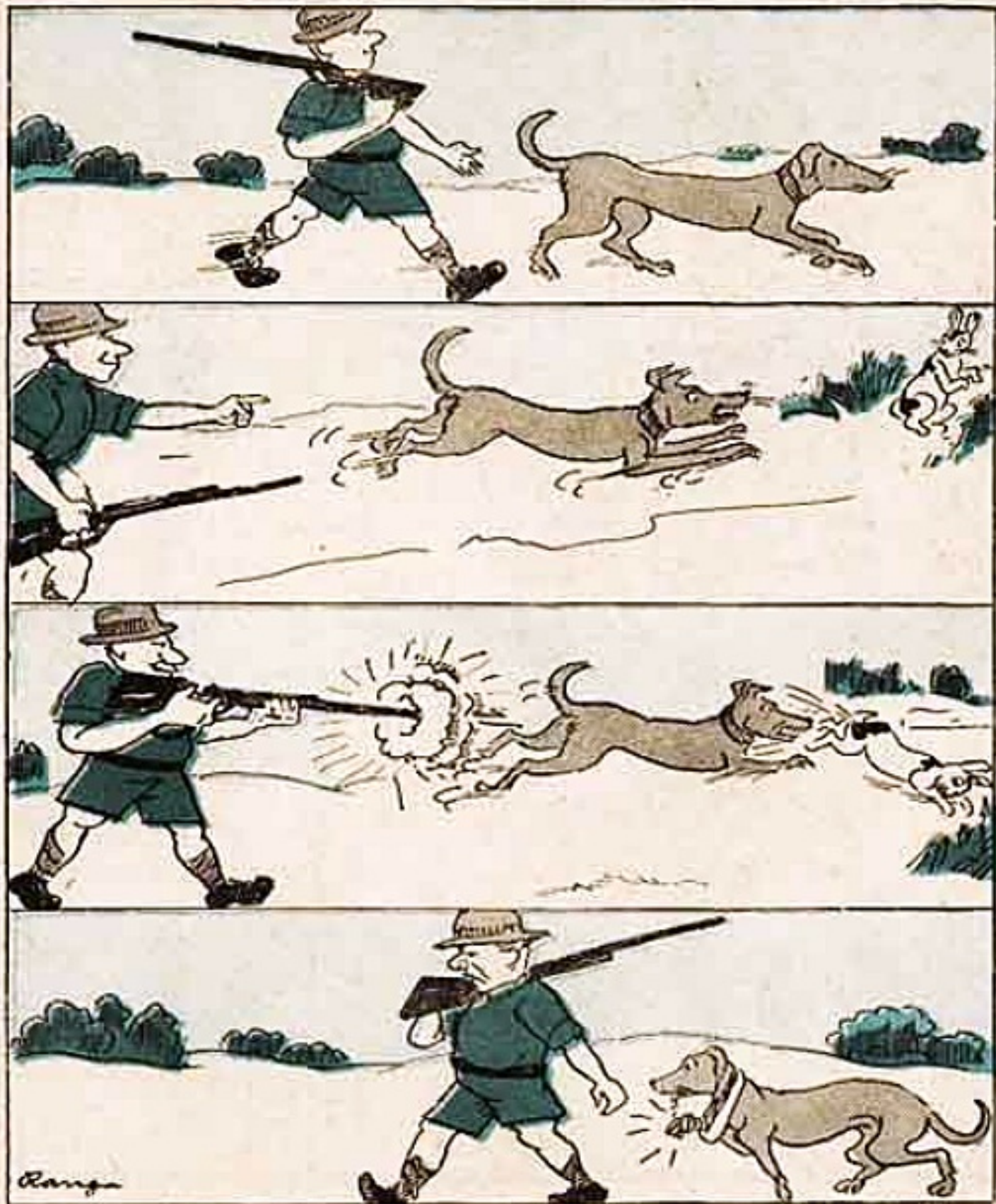
फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

जून १९६२ :: पारितोषिक १०)

कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें।

ऊपर के फ़ोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिए। परिचयोक्तियाँ दो तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिख कर निम्नलिखित पते पर तारीख ७ अप्रैल १९६२ के अन्दर भेजनी चाहिए।

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन,
वड़पलनी, मद्रास-२६

मार्च – प्रतियोगिता – फल

अप्रैल के फ़ोटो के लिए निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं। इनके प्रेषक को १० रु. का पुरस्कार मिलेगा।

पहिला फ़ोटो : सब से मेरा भाईचारा, रहती हूँ स्वच्छंद !

दूसरा फ़ोटो : तुम करते मनमानी हरदम, इसीलिए हो बन्द !!

प्रेषक : सुशीलकुमार राजपाली

C/o जी. एन. राजपाली, १८ कालीबाड़ी रोड, अन्दर सैंयादरवाजा, झाँसी.

अन्तिम पृष्ठ

पांच पाण्डव, कृष्ण, सात्यकी के अलावा जो पाण्डव योद्धा शेष रह गये थे, उनकी हत्या कर दी गई थी, यह हत्याकाण्ड समाप्त करके, कृप, कृतवर्मा, अश्वत्थामा उस जगह गये, जहाँ दुर्योधन घायल पड़ा हुआ था। दुर्योधन तब तक मरा तो न था, पर मरनेवाला था।

अश्वत्थामा ने उसको बताया कि कैसे उसने शत्रुओं का बध कर दिया था। फिर उसने कहा कि मैं तुम्हारे भविष्य की अपेक्षा, धृतराष्ट्र और गान्धारी के भविष्य के बारे में अधिक चिन्तित हूँ।"

अन्तिम क्षणों में दुर्योधन को यह जानकर बड़ी प्रसन्नता हुई कि पाण्डव पक्ष के सब योद्धा मार दिये गये थे। "हम फिर स्वर्ग में मिलेंगे।" यह कहकर दुर्योधन ने प्राण छोड़ दिये। प्रातःकाल हुआ। युधिष्ठिर को पिछली रात क्या हुआ था, मालूम हुआ। उसने नकुल को द्रौपदी आदि को बुलाकर लाने को कहा और स्वयं शिविर की ओर गया।

द्रौपदी अपने लड़कों के शव, बहिनों के शव, देख बड़ी दुखी हुई। "उस पापी अश्वत्थामा को पकड़कर, उसके सिर के सहज मणि न लाई गई, तो मैं यहीं उपवास करके मर जाऊँगी।"

भीम ने न आगे देखा, न पीछे, भीम रथ पर सवार हुआ और अश्वत्थामा को मारने के लिए निकल पड़ा। अश्वत्थामा के पास ब्रह्म शिरोस्त्र था। उसको द्रोण ने अपने लड़के और अर्जुन को दिया था। यदि अश्वत्थामा उसका उपयोग करता, तो भीम के प्राण न बचते। कृष्ण ने यह बात कहकर अर्जुन और युधिष्ठिर को रथ में बिठाकर ले गया।

दोनों रथ भगीरथी के किनारे पहुँचे। वहाँ व्यास, नारद आदि महाऋषि बैठे हुए थे। उनके पास ही वल्कल पहिनकर, शरीर पर धूल डालकर, अश्वत्थामा बैठा था। कुद्ध हो, जब भीम ने उसे युद्ध के लिए ललकारा, तो अश्वत्थामा डर गया, उसने दूब का तिनका लिया। ब्रह्म शिरोस्त्र को जप करके "पाण्डवों का नाश कर" उसने वह दूब फेंकी, वह अंगारे उगलता गया, इस बीच अर्जुन ने भी ब्रह्म शिरोस्त्र पढ़कर, उसे रोका। भीम की उससे रक्षा की।

दोनों अस्त्र एक दूसरे से टकराकर संसार को जलाने लगे। तब व्यास ने अश्वत्थामा और अर्जुन को फटकारा। आत्म रक्षा के लिए ही उसने उसका उपयोग किया था, यदि अश्वत्थामा ने अपने सिर की मणि दी, तो वह अपना अस्त्र वापिस ले लेगा।" अर्जुन ने कहा। अश्वत्थामा इसके लिए मान गया। उसने मणि तो दे दी। पर उसमें शस्त्र को वापिस लेने की शक्ति न रह गई थी। इसलिए वह यह आज्ञा देकर कि पाण्डवों का गर्भ नाश हो, चला गया। युधिष्ठिर आदि ने वह मणि लाकर द्रौपदी को दी। उसने सन्तुष्ट हो, युधिष्ठिर को उस मणि को धारण करने के लिए कहा। उस मणि को युधिष्ठिर ने धारण किया।

Printed by B. NAGI REDDI at the B. N. K. Press Private Ltd., and Published by B. VENUGOPAL REDDI for Sarada Binding Works,